भाषण-सम्भाषण

लेखक

देवनाथ उपाध्याय, एम० ए०

भूमिका लेखक

डा० अमरनाथ झा

किताब महल * इलाहाबाद, बम्बई

प्रथम संस्करण, १९४९

प्रकाशक—देवनाथ उपाध्याय, एम०, ए०
मुद्रक—इलाहाबाद प्रेस, इलाहाबाद ।

प्राक्कथन

"कहि है सब तेरो हियो मेरे हिय की बात"—यदि ऐसा हो सकता तो जीवन में कितनी शान्ति होती! परस्पर सम्बन्ध कितना मधुर होता? परन्तु हमें तो शब्दों की शरण लेनी पड़ती है, बोलना पड़ता है, विचारों और भावों को शब्दों द्वारा व्यक्त करना पडता है। हम जानते हैं हमारे पास शब्दों का सग्रह सीमित है, यथा समय समुचित शब्द सामने आते नहीं, बोलने पर समय निकल जाने पर हम पछताते हैं कि जो हम कहना चाहते थे उसे हम स्पष्ट रूप से सुन्दर शब्दों में व्यक्त नहीं कर सके। यह भी हम ठीक से नही कह सकते हैं कि हमारी बातों का सुननेवाले पर वही प्रभाव पड़ा कि नहीं कि जो हम चाहते थे। हसरत मोहानी कहते हैं :—

> "हाल सुनते वह क्या मेरा 'हसरत',
> वह तो कहिये सुना गई आँखे ॥"

आँखो की, मुद्राओं की, अधरों की, भृकुटी की सहायता लेनी पड़ती है। साराश यह कि बात करना, बोलना, वडा कठिन काम है। एक बार, विलायत में, एक अभियोगी को कचहरी मे न्यायपति ने कहा कि बारह स्त्रियाॅ जूरी में बैठकर तुम्हारे सम्बन्ध मे दोष निर्दोष निर्धारित करेंगी। उसने कहा, "मैं अभी से स्वीकार करता हूॅ कि मैं दोषी हूॅ। अपने घर में मैं एक अपनी पत्नी को तो धोखा दे नहीं सकता हूॅ—यह बारह स्त्रियों को धोखा देना तो सर्वथा असम्भव है"। जब एक या दो से बात-चीत करना कठिन होता हो, तो सभा मे, बडे समूह के सामने भाषण देना तो और भी दुस्तर है। इस पुस्तक मे भाषण कला की सविस्तर विवेचना की गई है।

इङ्गलैन्ड के एक अनुभवी विद्वान् का कहना है कि भाषण की सफलता तीन वस्तुओं पर निर्भर है—वक्ता कौन है? उसकी भाषण-शैली कैसी है? वह कहता क्या है? और इन तीन मे तीसरा सबसे

कम महत्व रखता है। यह तो एक विनोदरूप मे बात कही गई थी, परन्तु इसमें बहुत कुछ तथ्य भी है।

बहुत दिन की बात है प्रयाग में कालेज में मुन्शी ईश्वर शरण और पडित इकबाल नारायण गुर्टु पढ़ते थे। दोनो ने वक्तृता में अच्छी ख्याति प्राप्त की थी। उनकी इच्छा थी कि प्रसिद्ध न्यायपति सय्यद महमूद से कोई उनका परिचय करा दे। एक सज्जन इन दोनों विद्यार्थियों को सय्यद साहब के बँगले पर ले गये, इनका नाम बताया, और कहा, "ये दोनों साहबजादे बहुत अच्छा बोलते हैं।" सय्यद साहब ने इनको देखा और देखकर कहा, "हाँ। तो बोल बेटा।' भाषण देना इतना सरल नहीं है। यह सत्य है कि कभी-कभी अचानक बोलना पडता है, सोचने का अवसर नही मिलता है, और भाषण अच्छा भी हो जाता है। परन्तु जहाँ तक हो सके भाषण के प्रधान अश सोच लेना चाहिये। आरम्भ किस प्रकार करना है, अन्त में क्या कहना है, इस पर विशेष ध्यान देना चाहिये। एक ही स्वर मे आदि से अन्त तक नहीं बोलना चाहिये—इससे सुननेवाले ऊब जाते हैं। कभी-कभी श्रोता के विनोदार्थ भी कुछ कह देना चाहिये। इस प्रकार की बहुत सी बातें श्री देवनाथ जी उपाध्याय ने अपनी पुस्तक में लिखी हैं। महामना मालवीयजी, व्याख्यान वाचस्पति पडित दीन दयाल शर्मा, पंडित माखनलाल चतुर्वेदी हिन्दी में बडी अच्छी वक्तृतायें देते थे। परन्तु तीनों की शैली भिन्न थी। प्रत्येक वक्ता की अपनी विशेष शैली होती है। किसी का अन्ध-अनुकरण हानिकारक है।

हिन्दी में इस प्रकार की कोई पुस्तक अब तक मैंने नहीं देखी है। मुझे विश्वास है कि इसका आदर होगा।

अमरनाथ झा

२६-७-४६

विषय-सूची

अध्याय				पृष्ठ
१	क्यों बोले !	...	....	१
२	कितना बोलें !	...	....	१०
३	भाषण की तैयारी	...	...	१६
४	भाषण क्रिया	....	....	३४
५	मनोविनोद	...	....	५२
६	भाषण का प्रारम्भ	...	...	६४
७	भाषण का अन्त	...	...	७७
८	बाधाओं का निराकरण	...	...	८३
९	वक्ता की भूलें	...	....	९५
१०	वाद-विवाद	....	....	१०२
११	इन्टरव्यू	...	....	१४१

अध्याय १

क्यों बोलें ?

बोलना मजाक नही है। सबको बोलना नही आता। हम बचपन से बुढौती तक बोलते रहते हैं। जगे रहने पर तो बोलते ही रहते हैं रात को सो जाने पर भी कभो-कभी बडबड़ाते हैं। पढ़ते समय, लिखते समय, काम करते समय, आराम करते समय, और तो और खाते-पीते समय भी हम बोलने से बाज नही आते।

दिन भर में एक साधारण मनुष्य जितना बोलता है उसे यदि लिपिबद्ध करें तो एक छोटी-मोटी पुस्तक तैयार हो जाय। एक महाशय हफ्ते मे एक दिन मौन रहा करते थे। पर अपनी बाते वे कागज पर लिख-लिखकर दूसरो को बताते थे। दूसरों की सुन लेते थे, अपनी लिख देते थे। अधिकतर चर्खा चलाते रहते, बोलने पर प्रतिबन्ध लगा रखा था। सध्या समय मैंने देखा, उन्होंने २४ पृष्ठ की एक पूरी कापी रँग डाली थी।

एक वक्ता एक घटे के व्याख्यान में इतना बोलता है कि चालीस-पचास पृष्ठ की एक पुस्तक तैयार हो जाय। ८, १० घंटे बोल दे तो एक ग्रथ तैयार हो जाय। कोई कितना ही बड़ा लिक्खाड होगा, पाँच-छः महीने घोर परिश्रम करे तब कही इतना मोटा एक ग्रंथ तैयार कर सकता है। लिखने की गति कितनी कम है। हम रोज़ दो-एक चिटठी लिखते हैं, शाम को बैठकर अपनी डायरी पर दो-चार सतरें लिख मारते हैं। सो भी क्यों? कार्ड मेज पर रखा हुआ है, आलस्यवश

नहीं लिखते। जब कार्ड उठाते ही हैं तो लिखते हैं—आज कल काम बहुत है, लिखने की फ़ुर्सत नहीं मिलती। डायरी हममें से बहुतों की ३,४ दिन पर एक दिन भरी जाती है। एक सरकारी कर्मचारी ने तो महीने भर की डायरी अंतिम तारीख को लिखी और उस दिन के कार्य-विवरण में लिखा—महीने भर की डायरी तैयार की। सच बात लेखनी से उतर ही तो गई।

विचार तो कीजिये हम कितना कम लिखते हैं, किन्तु जब से स्कूल जाते हैं और जब तक युनिवर्सिटी छोड़ते हैं, लिखने का तौर-तरीका सीखते रह जाते हैं। इतना ही क्यो, जीवन-पर्यंत अपनी शैली को सुधारते जाते हैं।

हम बोलते इतना अधिक हैं, लिखने की अपेक्षा सौ गुना अधिक; लेकिन बोलने की शैली पर भला किसका ध्यान जाता है?

बोलना एक कला है। बोलना विज्ञान है। बोलना सीखने की चीज है, अभ्यास करने की चीज है; तब तो बोलना आता है। भेड़िये की मांद में मनुष्य के ऐसे बच्चे पाये गये हैं जो बोल नही पाते। मनुष्य के साथ रहते-रहते उन्हे मनुष्य की तरह बोलना आता है। माता हमें बचपन मे बाबा, काका, नाना कहना सिखाती है। लेकिन बड़े होने पर न कोई सिखाता है, न हम सीखते हैं, हम बिलकुल उदासीन हो जाते हैं। हमें कोई गूँगा नही कहता, यही बहुत है।

यही कारण है कि हमे बोलने में इतनी कठिनाई होती है। भाषण देने का यदि आपको कभी सौभाग्य या दुर्भाग्य मिला हो तो आपका अनुभव होगा—कम से कम प्रारम्भिक अवस्था मे—कि आपकी जबान बन्द हो जाती है। आप सोचते हैं, बिचारते हैं,

मस्तिष्क को दौड़ाते हैं लेकिन कोई बात आ नहीं रही है। मस्तिष्क में बीसों बातें चक्कर काट रही हैं लेकिन आप किसी को पकड़ नहीं पाते। मिनट, डेढ़ मिनट बीत गये, आपकी बोलती बन्द। तब तो सुननेवाले घूर-घूरकर आपको देखने लगते हैं; आपके बोलते समय जिनका ध्यान इधर-उधर था, आपके चुप होते ही सब एकाग्रचित्त हो गये। आप मनौती मानते हैं—हे भगवान्! कहीं से कोई पुलिस कर्मचारी आता और मुझे पकड़ ले जाता! साल छः महीने की जेल अच्छी, लेकिन इस भीड़ के सामने मुँह दिखाना अच्छा नहीं। आप अब भी चुप हैं; लोग तरह-तरह की फबतियाँ कसते हैं। कोई बनावटी तौर पर खाँस देता है; कोई कहता है मूर्ख है और कोई कहता है बेहया है; तब तो आप धरती माता से मनाते हैं—हे धरती माता! तू फट जाती और मुझे गोद में ले लेती।

स्पष्ट है सार्वजनिक सभा मे भाषण देना कठिन काम है, यद्यपि ऐसे अवसर पर आपको पर्याप्त सुविधायें मिली रहती हैं। यदि आप चाहे तो प्रतिपाद्य विषय को छोड़कर दो-चार इधर-उधर की बातें भी कर सकते हैं, आप कोई चुभती हुई कहानी कहकर श्रोताओं का मनोरंजन कर सकते हैं, लोग सुनते जायेंगे और तालियाँ भी बजाते जायेंगे। सभापतिजी आपको रोकेंगे नहीं, भले ही उन्हे भाषण अच्छा न लगता हो। हमारे देश के श्रोता अब भी इतने कृपालु हैं कि आपके भाषण का एक शब्द भी उनकी समझ में न आवे तब भी दस मिनट तक सुन लेंगे। हिन्दी जाननेवालों के बीच आप अंग्रेजी की शब्दावली उगल सकते हैं, लोग चुप-चाप सुन लेंगे, वैसे ही जैसे राग-रागनी न जानने पर भी लोग पक्के गाने तन्मय होकर सुनते हैं। देखा आपने सार्वजनिक सभा में बोलने में इतनी स्वतंत्रता है, पर बोलना कितना कठिन है!

...इससे भी अधिक कठिन अवसर तब आता है जब श्रोताओं की संख्या कम हो जाती है, जैसे धारा सभाओं में बोलना। सौ दो सौ श्रोता आपके सामने बैठे हैं, ऊँचे आसन पर एक स्पीकर बैठा हुआ है। श्रोता इधर-उधर की सुनना नही चाहते, स्पीकर आपको विषयान्तर नही करने देता है। आपका एक-एक वाक्य तौला जा रहा है। आप गये हैं कानून बनाने लेकिन स्वयं कायदे-कानून से जकड़े हुये हैं।

श्रोताओं की सख्या और भी कम कर दीजिये, बोलना अपेक्षाकृत कठिन हो जायेगा। कमेटियों में बारह, चौदह आदमी बैठते हैं। वहाँ आप सरीखे बहुतेरे विशेषज्ञ हैं। कमेटी किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचार कर रही है, जिसका प्रभाव विशाल जन समूह पर पड़ेगा। आप पर भारी दायित्व है। एक-एक शब्द सँभल-सँभलकर बोलते हैं। आपके तर्कों की काट-छाँट हो रही है, जरा-सा आप फिसले कि कई हाथ नीचे गिरे।

और इससे भी कठिन अवसर तब आता है, जब आप कैबिनेट मे या अंतरग सभा में बोलते हैं। यहाँ तो आप की बातों के आधार पर देशव्यापी योजना बनाई जा रही है, किसी राष्ट्र, किसी संस्था या संगठन के जीवन-मरण की समस्या हल हो रही है। देखिये तो सही आप कितने गहरे पानी मे हैं।

जब सुननेवाला एक रह जाता है तो बोलना और कठिन हो जाता है। आप आश्चर्य मे पड़ गये होगे। आप कहते होगे, हमें तो ऐसे मौके पर कभी कठिनाई नहीं हुई। कठिनाई होती है, आप उस पर ध्यान नहीं देते। सार्वजनिक सभा में, धारा सभा में, कमेटी मे, और कैबिनेट मे आप की बात मानी जा सकती है, अथवा ठुकराई जा सकती है, लेकिन जब आप एक ही व्यक्ति से बोलते हैं तो जो

कुछ आपने कह दिया वह अंतिम निर्णय है। आपने अपने नौकर को कोई आज्ञा दे दी, उसे मानना ही होगा। अपने लड़के से या अपनी स्त्री से कोई बात कह दी, किसी के तर्क करने की गुंजाइश नहीं। अपने मित्र को कोई राय दे दी, यदि वह तर्क करने लगा तो आप बिगड़ उठे—तर्क ही करना था तो पूछा क्यों ? मैंने तो अपनी राय दे दी, तुम जानो तुम्हारा काम जाने। इस मनोवृत्ति के कारण हम आपसी बातचीत की गम्भीरता पर ध्यान नही देते। बात जो मुँह से निकल गई, वापस नही आने की। तीर जो धनुष से छूट गया, हाथ नही लगने का। इसी लिए बहुत दिन पहले रहीम कह गये हैं—

बिगड़ी बात बने नहीं, लाख करो किन कोय।

रहिमन बिगड़े दूध को, मथे न माखन होय।

अभी एक प्रकार की बातचीत और रह जाती है। यह सबसे अधिक कठिन है। यह क्या है ? स्वयं अपने से ही बोलना। हम बोलते हैं, हम ही सुनते हैं। अपनी बातों की काट-छाँट करते हैं, अपने ही विचार करते हैं, तर्क करते हैं, तब हम तन्मय हो जाते हैं। ब्रह्म से बाते करते हैं और बड़े भारी विचारक और दार्शनिक कहलाते हैं। इस कोटि की बातचीत कठिन है, बहुत ही कठिन है, इतनी कठिन है कि लाख मे एक ही आदमी ऐसी बात करना जानता है।

शब्द में शक्ति है। चुभता हुआ शब्द चुभते हुए तीर से अधिक मार करता है। मन्त्र क्या है ? शब्द समूह ही तो है। किसी तांत्रिक को देखिये आपको चक्कर में डाल देता है। सड़क के किनारे खड़ा हुआ जादूगर हजारो की आँख पर परदा डाल देता है। एक सफल वक्ता लाखों के हृदय मोह लेता है। लोग मन्त्रमुग्ध की नाईं निहारते रह जाते हैं।

लेकिन कौन ध्यान देता है इन बातों पर ? सार्वजनिक सभा में

भाषण करनेवाला अनाप-शनाप बक लेता है, लोग तालियाँ बजाते हैं। धारा सभाओं के सदस्य ऊँघते हैं, और कमेटियों से लोग हाँ हूँ करके खिसक जाते हैं। एक डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के एक मेम्बर ने दूसरे का हाथ पकड़कर ऊपर उठा दिया। पूछा—क्यों उठाते हो? कहा—गिनती हो जाती है तो बताता हूँ। गिनती हो जाने पर पूछा तो कहा—पूछा गया था कि कौन-कौन सदस्य ऊँघ रहे हैं। सदस्य ने प्रतिरोध किया—मैं ऊँघ थोड़े रहा था।

बहुत दिनों से सुनता आया हूँ 'एक चुप सौ को हरावे'। लेकिन अब तक कोई ऐसा गूँगा नहीं देखा जिसने सौ को हराया हो। जिसे बोलना नहीं आता वह चुप रहता है, उसे डर है कहीं उसकी पोल न खुल जाय। लोग कहते हैं—बड़ा धीर है, गंभीर है।

गुपचुप बैठ रहना अच्छा नहीं। भगवान् ने मुँह दिया है किस लिये? आप की घड़ी टिक-टिक करती रहती है। यदि वह कभी खामोशी धारण कर ले तो क्या होगा? एक सज्जन ने एक पुरानी मोटर गाड़ी खरीदी। उनके मित्र ने पूछा—कहो गाड़ी का क्या हाल है? कहा—सिवा हार्न के हर एक पुर्जा शोर मचाता है। स्पष्ट है जिसे बोलना आवे उसे ही बोलना चाहिये। बोलना सब का काम नहीं।

अधकचरे वक्ताओं द्वारा समाज की बड़ी हानि हो रही है। मञ्च पर आये, एक घंटा बोल गये। एक हजार आदमी सुन रहे हैं, सब का एक-एक घंटा समय गया। कुल एक हजार घंटा। फल क्या? कुछ नहीं। ऐसे वक्ताओं को मञ्च पर न आना चाहिये। यदि वे अनधिकार चेष्टा करते हैं तो उन्हें रोकना चाहिये। इसीलिये जब सरकारें बोलने पर रोक लगाती हैं तो मुझे कभी-कभी बड़ी प्रसन्नता होती है। जो बेसुरा राग अलापता है उसका गला घोंट दो। समय का अपव्यय तो न होगा। मेरी राय है कि जिस प्रकार हर एक आदमी अखबार नहीं

निकाल सकता, बल्कि अखबार निकालनेवाले को रजिस्ट्री करानी पड़ती है, उसी तरह वक्ताओं की भी रजिस्ट्री कर दी जाय। हाँ, जो रजिस्ट्री कराना चाहे वे भाषण देने का ढंग पहले सीख लें।

हमारा निश्चित मत है कि बोलना इसलिये नहीं आता कि लोग बोलने पर ध्यान नहीं देते और न कभी बोलना सीखने या अभ्यास करने का प्रयत्न करते हैं।

जैसा हम ऊपर लिख आये हैं बोलना साधारणतः कठिन काम है। हर प्रकार की बोली मे मच पर से बोलना अपेक्षाकृत सरल काम है। विविध अवसरों पर बोलने के लिये मोटे तौर पर एक से ही सिद्धान्त निरूपित किये जा सकते हैं। मंच पर से बोलने की विधियों का हम विशेष रूप से उल्लेख करेंगे। और जितने प्रकार की बात-चीत हम करते हैं उनका तौर तरीका इसी से संलग्न है। आगे चल-कर थोड़े मे विविध प्रकार की बात चीत पर सक्षेप मे प्रकाश डालेंगे।

लेकिन किसी से पूछिये, तो भाषण देने के संबध मे कोई नियम न बतावेगा, भले ही वह कुशल वक्ता हो। अगर बताने भी चले तो विषय को बिलकुल हौवा बना देगा। आपका धीरज ही टूट जायेगा या आपकी हँसी होगी। एक बार मैंने एक जादूगर से जादू सीखना चाहा। वह बताने पर तैयार हुआ। कहा ५१ रुपये लूँगा। मैंने कहा ले लेना। एक अगरखा माँगा; मैं देने पर तैयार हुआ। फिर कहा मगलवार को आधी रात के समय श्मशान पर एक आदमी की खोपड़ी लेकर पीपल के पेड़ के नीचे हाजिर होऊँ। मुझसे यह न हो सका और न जादू सीख सका।

एक भाषण कला विशेषज्ञ ने अपने विद्यार्थियों को बताया कि वक्ता को विविध भाषाओं का ज्ञान होना चाहिये। अर्थशास्त्र, दर्शन

शास्त्र, इतिहास, भूगोल, पुरातत्व, राजनीति आदि आदि का ज्ञान अनिवार्य है। उसे भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान आदि की पूरी जानकारी होनी चाहिये। उसे देश-देशान्तरों में भ्रमण करना चाहिये, आदि आदि। इतना सुनने पर आप का जोश ठंडा पड़ सकता है।

एक मास्टर साहब ने अपने लड़कों से कहा कि स्कूल बन्द हो जाने पर उन्हे भाषण देने का अभ्यास करना चाहिये। अगर कोई सुननेवाला न मिले तो लैंप पोस्ट के सामने खड़े होकर भाषण देना चाहिये। शाम होते-होते क्लास के १०, १२ लड़के स्कूल के सामने-वाले लैंप पोस्ट के पास खडे होकर लगे चीखने-चिल्लाने। लैंप जलानेवाला आया तो देखकर भाग खड़ा हुआ। पुलिस चौकी पर जाकर रिपोर्ट की कि स्कूल के लड़के आपस में लड़ रहे हैं। पुलिस को आना पड़ा। दूसरे दिन से विद्यार्थियों को अपना अभ्यास बन्द कर देना पड़ा।

ऐसे उपदेशकों के उपदेश से दूर रहना चाहिये। भाषण देना कठिन अवश्य है, लेकिन भाषण कला सीखना आसान है। कुशल वक्ता बनते-बनते बनता है। वह भाषण कला सीखकर पैदा नहीं होता। डेमास्थनीज़ विश्व प्रसिद्ध वक्ता हो चुका है। वह पहले हकलाया करता था। बाद को उसने मुँह में रोड़ा डालकर समुद्र के किनारे चिल्लाना शुरू किया। उसका हकलाना खतम हो गया, आज भी उसका नाम हम ले रहे हैं।

चर्चिल ब्रिटिश पालियामेंट में विरोधी पक्ष का नेतृत्व करता है। वह बोलता है तो सरकारी पक्ष के दाँत खट्टे हो जाते हैं। बचपन और जवानी में वह मौका ढूँढ़-ढूँढ़कर बोला करता था। कहा जाता है कि एक पोलो का खेल समाप्त होने पर वह उठकर बोलने

लगा । लोगों ने उसे रोका पर न माना। फिर ज़मीन पर पटक दिया। उसके ऊपर एक गद्दा रख दिया और उस पर दो-तीन आदमी चढ़ बैठे। चर्चिल कब माननेवाला था। वह उठ बैठा और फिर बोलने लगा। हिटलर खूब बोलता था। रोज़ आठ-दस सभाओं तक में भाषण दे आता था। मुसोलिनी के बारे मे कहते हैं कि रात को वह बिस्तर में पड़े-पड़े दूसरे दिन के भाषण को तैयार करता था। कभी-कभी बड़बड़ा उठता था। उसकी माँ समझती कि उसे कोई बीमारी हो गई है। मुस्तफा कमाल पाशा १९२७ मे लगातार ६ दिन तक प्रति दिन ७ घंटे के हिसाब से बोलता रहा।

सफल वक्ताओं का ऐसा कार्य-क्रम रहा है। क्या आप भी सफल वक्ता बनना चाहते हैं? आप का कार्य-क्रम क्या है?

अध्याय २

कितना बोलें ?

बचपन की किताबों में पढ़ा था—बकबक मत कर । सो आज भी सही है । सभाओं में बकबक करनेवाले मिल ही जाते हैं । वे बेमतलब की बात बोलते रह जायेंगे । आध घंटा, एक घंटा, दो घंटे, ढाई घंटे । एक पादरी महोदय एक चर्च मे ऐसे ही बोलते गये । एक एक करके लोग उठने लगे, सबके सब उठकर चले गये । पादरी महोदय बेधड़क बोलते जा रहे थे । अंत में केवल दरबान रह गया । उसका भी धीरज जाता रहा । उठकर मंच पर आया । पादरी साहब को चर्च की कुंजी देते हुये बोला—बोल लीजिये, जब भाषण समाप्त हो जाय तो दर्वाजा बन्द करके, ताली हमारे घर भेज दीजियेगा ।

एक दाढीवाले सज्जन लेक्चर दे रहे थे । श्रोताओं में से सब एक एक करके उठकर चले गये । रह गया एक बूढ़ा आदमी । सो भी बैठा-बैठा रोने लगा । वक्ता महोदय उस पर बहुत प्रसन्न हुये और बोले—तू खुदा का प्यारा बन्दा है । तुझ पर उसकी नियामतें नाजिल होंगी । तुम्हे अगर कुछ उज्र करना हो तो कर । बूढ़ा खड़ा हुआ और बोला—कहते चलिये । बात यह है कि हमारे पास एक बकरा था, जो दस साल हुये मर गया । उसकी दाढ़ी भी ऐसी ही थी । जब आप बोलते थे तो आप की दाढ़ी हिलती थी और मुझे अपने बकरे की याद आ जाती थी । मैं बकरे की याद मे रो रहा था ।

ख्याल है कि धारा सभाओं मे स्पीकर ऐसे वक्ताओं को जो बेकार

की बकवास करते हैं, बिठा देते हैं। सार्वजनिक सभाओं मे कुछ कठिनाई है। सभापति यह जानते हुये भी कि वक्ता अनर्गल प्रलाप कर रहा है उसे शिष्टाचार के नाते नहीं बिठाता। अगर घंटी बजाता भी है तो वक्ता सुनकर भी अनसुना कर देता है। यह अशिष्टता है। श्रोता ऐसे वक्ता की हँसी उड़ाते हैं, तालियाँ बजाते हैं। कहीं कोने से आवाज आती है बैठ जाइये। हम लोग जब युनिवर्सिटी मे पढ़ा करते थे तो वक्ता को तंग करने का एक नया ढंग निकाल लिया था, मेज के नीचे फर्श पर जूता रगड़ते थे। सैकड़ों जूते साथ घिसते, वक्ता अगर होशियार होता तो बैठ जाता। वक्ताओं मे आज तक भी सुधार नहीं हुआ। कह नही सकता विद्यार्थी समाज ने कालान्तर में अपना सुधार किया अथवा नही।

एक बार एक वक्ता महोदय एक सभा मे उठ खडे हुये और बोलते ही चले गये। सभापति ने बहुत रोका, पर सुनता ही कौन है। भाषण समाप्त करके बोले—मैं सभापतिजी को चुनौती देता हूँ वे हमारे किसी भी आरोप को गलत प्रमाणित करें। सभापतिजी उठ-कर बोले—जिस बीमा कपनी के प्रबन्ध की आलोचना आपने की है, उसकी बैठक बगलवाली इमारत मे हो रही है। यह तो स्कूल का वार्षिक अधिवेशन है।

कोई जरूरी नहीं कि बड़ा भाषण ही प्रभावकारी हो। छोटा भाषण भी बडे काम का होता है। भारत कोकिला श्रीमती सरोजिनी नायडू को अप्रैल १९४४ में बबई मे अ० भा० महिला सम्मेलन, भारतीय राष्ट्रीय महिला कौंसिल, बबई प्रान्तीय महिला कौंसिल और सैकड़ों अन्य सार्वजनिक संगठनों की ओर से मान पत्र दिया गया। जनता-का हृदय प्रेमोद्गार से उछल रहा था। मानपत्रो मे भारत कोकिला की बहुमुखी सार्वजनिक सेवाओं के लिये भूरि-भूरि प्रशंसा की गई।

इन सारे मान-पत्रों के उत्तर में भारत कोकिला ने कहा—नमस्ते। सरकार ने उनके बोलने पर रोक लगा दी थी। इस गंभीर परिस्थिति में एक शब्द नमस्ते का जितना प्रभाव पड़ा उतना साधारण वक्ता के घंटों तक बोलने का न पड़ेगा।

एक वक्ता महोदय से मैंने पूछा आप देर तक क्यों बोलते हैं। उन्होंने कहा—जानते नहीं घोड़ा और वक्ता घंटे आध घंटे चल लेते हैं तब गर्मी आती है। सही हो सकता है। घंटे आध घटे के बाद सवार और श्रोता तो ठंडे पड़ जायेंगे। सवार तो लगाम खींचकर घोड़े को खड़ा कर लेगा पर श्रोता को अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय ने आज तक ऐसी कोई लगाम नहीं दी जिससे वह वक्ता पर नियंत्रण कर सके।

वक्ताओं को आदत है इधर-उधर की बातों से भाषण प्रारंभ करते हैं। बहुतेरा मिथ्या शिष्टाचार निभाते हैं। धन्यवाद देते हैं, क्षमा याचना करते हैं, एक श्लोक कहते हैं, एक शेर कहते हैं। इस प्रकार १५ मिनट वक्त काट लेने के बाद अपने विषय पर आते हैं। यह बिलकुल गलत तरीका है। सभापति ने आपका परिचय दे दिया। आप चटपट प्रतिपाद्य विषय पर आइये। धन्यवाद देना आपका काम नहीं, आप तो स्वयं धन्यवाद के पात्र हैं। आप में एक नहीं हजार अवगुण भले हों श्रोताओं से क्षमा याचना मत कीजिये। सभापति ने यदि आपका परिचय करते हुए कुछ अतिरंजन किया है, आप को विद्वान्, धनवान या कुशल कलाकार कहा है तो यह आपका कर्तव्य नहीं है कि आप उनका विरोध करें। आप चटपट अपने विषय पर आइये। हाँ, यदि प्रारंभ में आप भगवन्नाम स्मरण किया करते हैं तो कर लीजिये। यदि सरस्वती की स्तुति करना ही चाहते हों तो कर लीजिये, लेकिन कोई लंबी भूमिका मत बाँधिये। विषय के

प्रतिपादन में एक बात का और ध्यान रखिये । महत्वपूर्ण बातें भाषण के पूर्वार्द्ध मे आ जायें । यदि आपने हल्की बातों से भाषण प्रारभ किया तो लोग उसी को आप की योग्यता का मापदड मान लेंगे । एक वार आप का रंग उखड़ा, फिर न जमेगा ।

जितना समय आपको दिया गया है, उसका ध्यान रखिये । समय के अनुसार भाषण की रूपरेखा तैयार कर लीजिये । फिर भाषण दीजिये । मैंने बहुतेरे ऐसे वक्ता देखे हैं जो कम महत्व की बाते या भरती की वाते कहते रह जाते हैं, जब समय आ जाता है और घटी बजती है । तब उन्हे भूल का पता चलता है । फिर उछल-कूदकर दो-चार बाते पकड़ पाते हैं, समय बीता, तालियाँ पिट गई, वक्ता महोदव शर्म के मारे गड गये ।

समय न भी निर्धारित हो तो वक्ता को समय का अनुमान स्वय करना होगा । भाषण देते समय आप श्रोताओं की ओर देखते जाइये, उनकी मुखमुद्रा से आपको पता चलता रहेगा कि आप कितनी मंजिल पार कर चुके हैं । श्रोता आपकी बाते कितनी देर तक सुनने को तैयार हैं, इसका अनुमान आप स्वयं कर सकते हैं । फिर उतनी ही देर तक बोलिये अधिक नहीं । यदि वे ऊँघ रहे हैं, ध्यान नही दे रहे हैं, जहाँ-तहां खॉस-खूँस रहे हैं तो आप समझिये कि आपका टिकट कट चुका है ।

हमारे साथ एक लड़का पढ़ता था । वह वाग्विवाद प्रतियोगिता मे हमेशा नवर मार ले जाता था । दस मिनट बोलने को मिलते तो वह सात ही मिनट तक बोलता । हममें से बहुतेरे दस की जगह १२ मिनट बोलते और खाली हाथ घर जाते थे ।

चीजों की कमी हो जाती है तो सरकार कन्ट्रोल लगाती है । समय की भी कमी है । 'जीवन दो दिन का', 'दुनिया फानी है' सुनता

आया हूँ; लेकिन समय पर अब तक किसी ने कन्ट्रोल नहीं लगाया। अब समय है कि वक्ता स्वय समय पर कन्ट्रोल लगा ले। समय की निर्धारित सीमा का उल्लंघन न करे। यदि हो सके तो अपने कोटे में से बचाकर कुछ समय दूसरों को दे।

लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि हमसे दस मिनट तक बोलने को कहा जाता है आर ४, ५ मिनट तक भी नहीं बोल पाते। ऐसा शुरू-शुरू के दिनों में होता है जब हम मंच पर आने में डर खाते हैं। अपने प्रारंभिक काल में हमें यदि दस मिनट तक बोलने का निमन्त्रण मिलता है तो हमें चाहिये कि बीस मिनट का भाषण तैयार करें। दस मिनट बहुत होता है, नौसिखिये के लिये इतनी देर तक बोलना खेल नहीं है।

भाषण के प्रारंभ और उसके अंत की सुस्पष्ट रूपरेखा पहले से ही तैयार कर लीजिये, फिर बीच के भाषण द्वारा दोनों को निकट लाने की कोशिश कीजिये। भाषण को छोटा करने में यह गुर बड़ी सहायता करेगा।

परन्तु आपके भाषण द्वारा प्रतिपाद्य विषय के हर पहलू पर पूरा और समान प्रकाश पड़ना चाहिये। आपका भाषण सुननेवाला जैसे-जैसे समय बीतता जायेगा, एक-एक कदम आगे बढता जायेगा, एक के बाद दूसरी बात समझता जायेगा और उसे कोई झटका भी न लगेगा, मानो समतल भूमि पर चल रहा हो।

किसी-किसी अवसर पर अधिक देर तक बोलना बहुत बुरा है। किसी का परिचय देने में, किसी के प्रस्ताव का समर्थन करने मे, किसी को धन्यवाद देने में और भोजनोपरान्त भाषण में आप जितना कम बोले उतना ही अच्छा।

परिचय देते समय आप सारी बातों को पहले से ही तैयार कर

लीजिये । और याद रखिये परिचय सही हो और वास्तव में परिचय हो। सभाओं के सयोजक अथवा सभापति पता नही क्यों वक्ताओं का परिचय पूछने मे सकोच करते है, पर देना चाहते हैं लबा परिचय। वे समझते हैं बड़ा परिचय देना आगन्तुक के बड़प्पन का परिचायक है। यह भूल है, थोड़े मे परिचय दीजिये और परिचय में भी परिचय की बाते कहिये।

प्रस्ताव का समर्थन करना केवल नियम की पूर्ति अथवा शिष्टाचार निर्वाहन है। लोग समर्थक से अधिक नहीं सुनना चाहते हैं। हाँ, यदि समर्थक प्रस्तावक द्वारा प्रतिपादित अशों के अतिरिक्त एकाध बात अधिक कह सके तो अच्छा है।

वैसे ही धन्यवाद देने की भी बात है। आप धन्यवाद देने को उतावले हो रहे हैं, फिर इधर-उधर की बात कहने मे धन्यवाद देने की क्रिया मे देर क्यों कर रहे हैं। श्रोताओं को और भी बाते सुननी हैं। आप की बातें तो उन्होने कई बार सुनी हैं।

भोजनोपरान्त भाषण देना एक विशेष कला है। दो-एक हँसी खुशी की बात कहकर समाप्त कर देना होगा। भर पेट खाने के बाद किसी को बैठना स्वीकार नहीं। भोजन के बाद पाचक थोड़ा-सा ही तो खाया जाता है। बस भोजनोपरान्त भाषण को पाचक समझिये।

हर प्रकार के भाषण के सबध में यह गुर याद रखिये। इतना ही बोलिये कि आप का भाषण समाप्त होने पर लोग कहे—कुछ और कहता तो अच्छा हुआ होता।

———

अध्याय ३

भाषण की तैयारी

जब हमें कोई सभा करनी होती है तो महीनों पहिले से तैयारी करने लगते हैं। पंडाल चाहिये, बिछौना चाहिये, मेज चाहिये, कुर्सी चाहिये, परदा चाहिये, यह चाहिये वह चाहिये। हजार चीजो की जरूरत होती है। इन्ही को एकत्र करने के लिये एक स्वागत समिति का निर्वाचन करते हैं। अखबारो में अपना कार्य-क्रम छपवाते हैं, निमंत्रण बॉटते हैं और भरसक कोशिश करते हैं कि अधिक से अधिक संख्या मे लोग आवे और सुनें। आगन्तुक वक्ता के स्वागत-सत्कार के लिये स्वागत समिति या सभा के सयोजक इतनी मिहनत करते हैं और उन्हे ऐसा करना भी चाहिये। यह चिष्टाचार की माँग है, मनुष्य मात्र का कर्तव्य है।

निर्धारित समय से पहले ही श्रोता आकर सभा मडप में आकर एकत्र होते हैं। किस लिये? सुनने के लिये। अपना मतलब साधने के लिये। उनका मतलब है वक्ता की बातों को सुनना।

कभी-कभी श्रोताओं की इतनी रेल-पेल हो जाती है कि पुलिस और स्वयंसेवकों को बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। कई बार लाठियाँ और गोलियाँ चलानी पड़ी हैं। लोग आते हैं सयोगकों के प्रचार से प्रभावित होकर और वक्ता के व्यक्तित्व से आकर्षित होकर। लेकिन वक्ता की बातों को सुनने की प्रबल आकांक्षा सबको रहती है।

इधर तो संयोजक इतनी परेशानी उठावें और श्रोता अपना बहु-

मूल्य समय देकर सुनने आवें, उधर वक्ता ने अगर कोई लाभ की बात नहीं बताई तो उसकी खैरियत नहीं। सब लोग यही कहेंगे इसे कुछ आता जाता नहीं, नाहक इतना वक्त लिया। पंडाल से लोग खिसकना शुरू करते हैं और पश्चात्ताप करते घर जाते हैं। यदि वक्ता ने कोई अच्छी बात बताई तो सब ध्यानपूर्वक सुनते हैं, उसे धन्य-वाद देते हैं और उसकी प्रशंसा करते घर जाते हैं। आपके श्रोताओं को आप की बातों की आलोचना करने का पूरा अधिकार है, वे आप के विषय में राय कायम कर सकते हैं, आप उन्हें रोक नहीं सकते हैं। आप की योग्यता के सच्चे पारखी आप के श्रोता हैं। मैं जब कहीं भाषण दे लेता हूँ तो जनमत संग्रह के विचार से पाँच मिनट इधर-उधर घूम लेता हूँ। श्रोता आपस में जो कुछ बातें करते हैं उनसे मैं अपनी सफलता का अनुमान कर लेता हूँ।

स्पष्ट है जब स्वागत समिति के सदस्य इतना परिश्रम करते हैं और श्रोता अपना बहुमूल्य समय आप को दान करने आये हैं तो ऐसे अवसर पर कुछ आप का भी कर्तव्य होता है। आप को बैठने के लिये ऊँचा स्थान दिया जाता है, आप को खड़े होने के लिये ऊँचा मंच दिया जाता है, इसलिये नहीं कि वाग्जाल फैलाकर आप श्रोताओं से वाहवाही लूटें, वरन् इसलिये कि मंच से आप सुविधा-पूर्वक सर्वसाधारण के लाभ की बातें बतलावें। जरा सोचिये तो सही, आप पर कितनी भारी जिम्मेदारी है। आप श्रोताओं को संतुष्ट कीजिये। उन्हें संतुष्ट करने के लिये अच्छा भाषण दीजिये, अच्छा भाषण देने के लिये अच्छी तैयारी कीजिये। उन्होंने आप के लिये बड़ी मिहनत की है। आप ने उनके लिये कितनी मिहनत की है? सब की मिहनत एक ओर, आपकी दूसरी ओर। दोनों बराबर होनी चाहिये तब तो आप अपने कर्तव्य का विधिवत पालन कर रहे हैं, अन्यथा नहीं।

वक्ता को चाहिये कि जब उसे भाषण देने का निमंत्रण मिले तो भाषण का विषय पूछ ले। कभी-कभी भाषण का विषय निर्धारित करने का पूरा अधिकार वक्ता को ही रहता है, यह बड़ी अच्छी बात है। कितने समय तक बोलना होगा, श्रोता किस कोटि के और कितने आनेवाले हैं, यह भी पहले से जान लेना लाभ-प्रद होगा।

यह और बात है कि किसी विषय पर आप दस-पाँच भाषण दे सकते हैं। फिर भी आप को जब उस विषय पर एक ही भाषण देना है तो आपको बड़ी मिहनत करनी है। आपको एक ढेर में से अच्छा माल चुनना है। सारी ढेर को कुरेद डालना होगा। विषय की काट-छाँट श्रोताओं की योग्यता देखकर करनी है। एक ही विषय को अपढ़ जनता के सम्मुख उपस्थित करने का ढग एक है और उसी को सुशिक्षित जनता के सम्मुख उपस्थित करने का ढग दूसरा। कल्पना कीजिये आपको 'जमीदारी उन्मूलन' पर भाषण देना है। किसानों की अपार भीड़ के सामने आप जिस शब्दावली का प्रयोग करेंगे, जिस ढंग से विषय का प्रतिपादन करेंगे वह मुट्ठी भर ज़मीदारों की सभा में अपनाये गये ढंग से बिल्कुल भिन्न होगा। और यदि आपको ऐसी जगह बोलना पड़ा जहाँ जमीदार व किसान दोनों हैं, तो आपको एक तीसरा ही रास्ता अपनाना होगा। देश और काल का ध्यान रखना भी आवश्यक होगा। आप हर घड़ी भैरवी नहीं गा सकते और न बारहो महीना फाग खेल सकते हैं।

यदि किसी एक ही विषय पर कई वक्ता बोलनेवाले हैं तो आपका दायित्व और भी बढ़ जायेगा। यदि हो सके तो पहले से ही पता लगा लीजिये कि क्या आपके अतिरिक्त और भी कुछ सज्जन बोलने आ रहे हैं। यदि हाँ, तो यह भी पता लगाइये कि बोलने-वालों में आपका क्रम क्या रहेगा। यदि सबसे पहले बोलने उठे तब तो कुशल है। यदि आपका नम्बर बाद को आता है तो आपको

अपना विषय हर पहलू से तैयार करना होगा। पूर्व वक्ताओं के कथन को छाँटते हुये बोलना होगा। निराश होने की जरूरत नहीं, आपको फिर भी दौड़ लगाने के लिये बहुत बड़ा मैदान मिलेगा।

जब वक्ता किसी विषय पर बोलता है जो उसके सामने एक लक्ष्य होता है। उसका एक अभिप्राय होता है। उस अभिप्राय तक उसे आने की कोशिश करनी चाहिये। भाषण जैसे-जैसे बढता जाय उत्तरोत्तर लक्ष्य के निकट पहुँचता जाय। भाषण तैयार होने पर ही वक्ता विचार कर ले, क्या इस भाषण से हम अपने लक्ष्य तक पहुँचते हैं। यदि हाँ, तो ठीक है। यदि नहीं, तो अपने भाषण को फिर से तैयार कीजिये, यथास्थान संशोधन, परिवर्द्धन और परिमार्जन कीजिये। फिर अपने मन में पूछिये क्या अपने लक्ष्य तक पहुँचे। कोशिश करते-करते आपके भाषण की वह विकसित अवस्था मिलेगी जिससे आपके लक्ष्य की पूर्ति होगी। भाषण से लक्ष्य की पूर्ति होती है और लक्ष्य की पूर्ति आपके भाषण की सफलता का परिचायक है।

भाषण देना है; घंटे आध घंटे तक बोलना ही है। कैसे इतनी देर तक लगातार बोलें—यह प्रश्न प्रारंभिक अवस्था में हर वक्ता को परेशान करता है। घबराकर वक्ता सारे भाषण को तैयार करके लिखता है। फिर उसे रट जाता है। सभा मे आकर वह रटे-रटाये भाषण को रख जाता है। एक ओर से शुरू किया, दूसरी ओर समाप्त हुआ। जैसे आया वैसे गया, श्रोता पर कोई गहरा प्रभाव नहीं पड़ा। एक ऐसे वक्ता के बारे में मैंने एक बार एक श्रोता का मत पूछा तो उसने कहा—'लालटेन के सामने पढ़कर सुनाता तो ज्यादा अच्छा रहता।' भाषण याद करके बोलने में एक बड़ा भारी संकट है। अगर कहीं एक कड़ी भूल हो जाय तब तो वक्ता चारों खाने चित्त

जा गिरेगा। यदि आप किसी मेले-ठेले में भूल जायँ तो कोई स्वयं-सेवक पकड़कर ठिकाने लगा देगा, लेकिन बोलते-बोलते भूल गये तो भगवान ही आपका मालिक है। फिर भी बड़े से बड़े वक्ताओं ने पूरा भाषण रटकर सुनाने की कोशिश की है। डिसरैली, मेकाले और पिट तक ने ऐसा किया।

भाषण को तैयार करने में एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि वक्ता को मालूम होता रहता है कि उसे क्या क्या कहना बाकी है। उसका आत्म विश्वास बना रहता है। वह आसानी से बोलता है जैसे वह यात्री जो रास्ता जानता है आसानी से चलता है। उसे भूलने-भटकने का डर नहीं रहता।

भाषण तैयार करने से दूसरा बड़ा लाभ यह है कि आप कम से कम प्रारंभिक अवस्था में भाषण को रुचिकर ढंग से प्रारंभ कर सकेंगे। आदि अच्छा तो अंत अच्छा। पहले जो सँभल गया, सँभल गया। जो लुढ़का वह न सँभल पायेगा।

जो लोग भाषण तैयार करके आते हैं और श्रोता पर यह प्रभावित करना चाहते हैं कि वे बिना तैयारी के बोल रहे हैं, वैसे ही आ खड़े हुये, वे अपने पैर में कुल्हाड़ी मारते हैं। श्रोता को यदि पता चले कि वक्ता ने भाषण तैयार करने में बड़ा श्रम किया है तो वह बड़ा प्रसन्न होगा। वह कहेगा—भाषण में कुछ सार जरूर होगा। वह ध्यानपूर्वक सुनेगा। यदि वह जान जाय कि तैयार करने पर भी आप बनते हैं तो आपको वह झूठा कहेगा। उसकी हमदर्दी खो देने पर आपका भाषण कौड़ी का महँगा हो जायेगा।

हमारे साथ एक सज्जन एक वाग्विवाद प्रतियोगिता में सम्मिलित हुये। एक-एक वाक्य और वाक्यांश पर लगे ठहर-ठहरकर बोलने। कभी सर खुजलाकर कोई शब्द उतारते तो कभी हाथ से ठुड्डी पकड़-

कर कोई वाक्य कहते, मानो वे जताना चाहते थे कि वे भाषण तैयार करके नहा आये हैं। ७-८ मिनट तक बोलने के बाद उन्हे मालूम हुआ कि केवल दो मिनट वक्त बचा है। फिर तो बड़े वेग से बोलने लगे। यही नही कि उन्होंने भाषण को तैयार किया था, उन्होने उसे रट भी लिया था।

वाग्विवाद प्रतियोगिता में तो भाषण को और भी अधिक तैयार करके आने की आवश्यकता है। प्रस्तुत विषय के खडन-मडन के लिये जितने भी तर्क सभव हों सब पर विचार कीजिये, तब उनका निरूपण कीजिये। जो दूसरों के तर्क सुनकर उनके आधार पर बोलने का दुस्साहस करते हैं वे जूठी रोटी खाने आते हैं। वे कभी सफल नहीं होते।

लेकिन किसी पुस्तक का कुछ उद्धरण लेकर रट लेना और उसे अपना कहकर दुहराना और भी बुरा है। किसी ख्याति प्राप्त कवि की रचना से उसका उपनाम निकालकर अपना नाम रखकर यश लूटनेवाले मनचलों के विषय में आपको बहुत कुछ सुनने को मिला होगा। एक कवि सम्मेलन में एक ऐसा ही मनचला आ धमका। रचना सुनाई तो चारों ओर से चोर-चोर की आवाज़ आई। पता चला कि उसने साहित्यिक चोरी की है—कवि की रचना चुराई है। वक्ता किसी पुस्तक के किसी अश का भाव ग्रहण कर ले, अच्छी बात है; लेकिन भाव भाषा दोनों को अविकल रूप से ग्रहण करेगा तो गिरफ्तार हो जायेगा और भरी सभा में चोर कहायेगा।

हमारे देश में तो नहीं, लेकिन कम से कम योरप के कई देशों मे और अमेरिका में कुछ ऐसे पेशेवर हैं जो दूसरों के लिये भाषण तैयार कर देते हैं। सौ दो सौ रुपया दे दीजिये और विषय बतला दीजिये, भाषण तैयार मिलेगा। ऐसा करना श्रोताओं के प्रति अन्याय

है। लोग आपकी बात सुनने आये हैं; आपके विचारों से लाभ उठाने आये हैं। किराये के टट्टू से उनका काम नहीं चलेगा।

बड़े आदमियों ने—मेरा मतलब है पैसे वालों ने—दूसरों से किताबें लिखाकर अपने नाम पर छपवाकर नाम कमाने की कोशिश की है। यदि वे दूसरों से भाषण तैयार कराकर भरी सभा में चोर बाजार करने आवें तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। किन्तु असल मे यह बड़ी गंदी आदत है। आपको कोई संस्था भाषण देने के लिये बुलाती है, आपके पास भाषण तैयार करने के लिये उपयुक्त समय और साधन है तब निमत्रण स्वीकार कीजिये अन्यथा न स्वीकार कीजिये, कोई जबर्दस्ती तो है नहीं। संस्थावाले किसी दूसरे को ढूँढ़ लेंगे।

भाषण में चूँकि विचारों का ही प्रकाशन होता है, अतएव यह स्मरण रखना चाहिये कि भाषण कला और विचार श्रृंखला से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सुप्रसिद्ध विचारक इमर्सन ने तो यहाँ तक कहा है कि मुझे एक विचार दे दो। मेरे हाथ, पैर, मेरी वाणी और मेरी मुख मुद्रा बिलकुल ठीक काम करेगी।

भाषण की तैयारी क्या है? एक वाक्य में उत्तर है—विचारों का संकलन। विचारों की कमी नहीं है। वे सोते-जागते, पढ़ते-लिखते, खाते-पीते सदा आते-जाते रहते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आप उन्हे पकड़ें और चुनकर रखें। आप को केवल अपना ध्यान केन्द्रीभूत करना होगा और एक उद्देश्य के निमित्त सलग्न होना पड़ेगा।

ड्वाइट एल० मूडी एक सुविख्यात धार्मिक उपदेशक हो चुका है। उसने लिखा है:

जब मैं कोई विषय चुनता हूँ, मैं एक बड़े लिफाफे पर विषय का

नाम लिख देता हूँ। मेरे पास कई ऐसे लिफाफे रहते हैं। यदि पढ़ते समय किसी ऐसे विषय पर जिस पर मुझे भाषण देना है कोई अच्छी बात मिलती है तो मैं उसे नोट करके सही लिफाफे में रखता हूँ। मैं उसे वहीं पड़े रहने देता हूँ। मैं हमेशा एक नोट बुक साथ रखता हूँ। प्रार्थना भवन में जब कोई ऐसी बात सुनता हूँ जिससे किसी विषय पर प्रकाश पड़ता हो, तो मैं इसे भी नोट कर लेता हूँ और लिफाफे में रख लेता हूँ। कभी-कभी मैं उन्हें साल सवा साल तक रखे रहता हूँ। जब किसी विषय पर बोलना होता है तो मैं एकत्र सामग्री को खोलता हूँ। उस सामग्री के साथ मैं निजी अध्ययन की बातों को जोड़ देता हूँ तो मुझे काफी सामग्री मिल जाती है।...

अमेरिका के भूतपूर्व प्रेसिडेंट लिंकन को जब भाषण देना होता था तो वह उस पर हमेशा विचार करता रहता चाहे वह अपने काम में लगा हो, चाहे भोजन करता हो, चाहे गाय दुहता हो या हाट बाज़ार जा रहा हो। ध्यान उसका हमेशा अपने विषय पर रहता। कभी-कभी छोटे-छोटे कागज़ के टुकड़ों पर नोट कर लिया करता। इन्हें वह अपने हैट में लगा लेता और जब शान्तिपूर्वक बैठता तो उनको सँभालता, दुहराता और लिखकर नोट तैयार करता।

जब वह प्रेसीडेन्ट हुआ तो उसे प्रारंभिक भाषण देना था। भाषण कितना महत्वपूर्ण था! वह दो-चार उपयुक्त पुस्तकों को लेकर एक छोटे से कमरे में बन्द हो गया जहाँ हवा का झोंका तक नहीं पहुँच सके। भाषण तैयार हो गया।

लिंकन का तरीका आप भी अपनावें। हफ़्तों पहले से तैयारी शुरू कर दीजिये। सोते, जागते, खाते, पीते, चलते, फिरते, पढ़ते, लिखते यदि आप भी विषय में लीन रहें तो आप सफल हो सकते हैं।

अपने मित्रों से जब आप बातें करें तो घुमा-फिराकर वही विषय

लाइये। अखबार पढ़ें और विषय से संलग्न कोई शीर्षक मिले तो उसे ध्यान से पढ़िये, अखबार का अवतरण देश काल के अनुरूप होगा, उसमें ताज़गी होगी।

विषय संबंधी किसी भी जानकारी को हाथ से न खोइये उसे चट नोट कर लीजिये। स्मरण शक्ति पर विश्वास करना ठीक नहीं। जितनी बातें आप पढ़ते हैं उनमें से आधी तो उसी दिन भूल जाती हैं।

आज-कल प्रायः हर विषय पर पुस्तकें मिल सकती हैं। पहले आप स्वयं विषय की अच्छी तरह छान बीन कर ले। फिर पुस्तकालय की शरण लीजिये। आप देखेंगे कि कोई न कोई पुस्तक आप की आवश्यकता के अनुरूप मिल ही जाती है। नोट तैयार कीजिये। मनन कीजिये। तब मित्रों से परामर्श कीजिये, गुरुजनों से मिलिये। कुछ लोग ऐसा करने मे भी सकोच करते हैं। वे सोचते हैं पूछने पर लोग मजाक उड़ायेंगे। कहेंगे—चले हैं, लेक्चर देने। अपने लेक्चर के पीछे मरे जा रहे हैं। ठीक है, यदि आप अपने लेक्चर के पीछे मरे जा रहे हैं तो आपका लेक्चर सजीव होगा अन्यथा नहीं।

भाषण के अंतर्गत कुछ विशेषज्ञों की सम्मति—उन्हीं के शब्दों मे और कुछ आँकड़े देने से प्रभाव अच्छा पड़ता है। इन्हे बहुत दक्षतापूर्वक एकत्र करना चाहिये। यदि छोटे हों तो याद कर ले और बड़े हों तो नोट कर लेना चाहिये।

आप पूछ सकते हैं कितनी तैयारी पर्याप्त कही जाय। इसका उत्तर है आप जितनी तैयारी करें अपर्याप्त है। लेकिन इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं। यदि आप को १० मिनट का भाषण देना है तो ३०, ४० मिनट का तैयार करके जाइये। आप को दो रुपये का सौदा लेना हो तो बाज़ार में १० रुपया लेकर जाइये। कौन जाने भाव

बढ गया हो या कौन जाने कोई नई चीज मिल जाय जिसे खरीदना आप उपयोगी समझते हों ? आप के पास जितना ही अधिक रुपया रहेगा आपकी हिम्मत उतनी ही बढ़ी रहेगी, भले ही सब रुपये की आपको तत्काल जरूरत न हो। उसी तरह आप अगर जरूरत से तीन चार गुना अधिक तैयार रहेगे तो आत्म विश्वास बना रहेगा।

कुछ लोग सोचते हैं, चलो कुछ तैयार कर लिया, कुछ बाते दूसरों के भाषण से लूँगा या बोलने उठूँगा . तो कुछ बाते इधर-उधर से याद आ जायेंगी। समझ रखिये दूसरे वक्ताओं की बातें तो जूठी है, उनमें वह मजा कहाँ। मच पर साधारणतः वक्ता के मस्तिष्क से पुरानी बाते उतरती हैं, नई बाते याद नही आतीं। संयोग - रोसे के मच पर जाना, और गलत उम्मेद बाँधना आप को धोके मे डाल सक्ता है।

इस अवसर पर मुझे एक कहानी की याद आ जाती है। एक औरत थी। वह केवल दो रोटियाँ पकाती थी। एक रोटी अपने पुत्र को देती और एक पति को। वे पूछते—तू क्या खायेगी। जवाब देती—मेरा क्या ? आधी तुम छोड़ दोगे और आधी तुम छोड़ दोगे। मेरे लिये बहुत होगा। औरत मोटी होती गई। बाप-बेटे ने उसकी बुद्धिमानी ताड़ ली। उन्होंने थाली मे छोड़ना बन्द कर दिया। औरत खाये बिना मर गई। याद रहे जो दूसरों के भरोसे मच पर खड़ा होगा, असामयिक मृत्यु मरेगा।

ज़रूरत से अधिक तैयार होना इसलिये भी अनिवार्य है कि वक्ता ने घर पर सभा के विषय में जो धारणा बनाई है सभा उससे बिलकुल भिन्न हो। इतना ही नहीं वक्ता बोलने उठा, फिर भी कई बातें ऐसी उपस्थित हो सकती हैं जो वक्ता को भाषण का तारतम्य बदलने को बाध्य करें। सभापति के कान में किसी ने कुछ कह दिया या एक कागज दे दिया जिसके अनुसार वक्ता को कतिपय बातों के कहने से करो

दिया गया। श्रोताओं की मुख मुद्रा से ऐसा लगे कि वे वक्ता से सहानुभूति रखते हुये भी उसकी बातों को सुनने को तैयार नहीं हैं। ऐसी स्थिति में वक्ता को अपना मार्ग बदलकर संचित सामग्री का उपयोग करना ही होगा। यदि वक्ता हर प्रकार से तैयार होकर आया है तो कैसी भी परिस्थिति क्यों न उत्पन्न हो किसी न किसी रास्ते से वह आगे बढ़ सकेगा और अपने लक्ष्य तक पहुँच सकेगा।

ऐसे अवसर पर जरा यह भी देख लेना चाहिये कि श्रोताओं में सब के सब उससे खिंचे जा रहे हैं अथवा उनमें केवल थोड़े से लोग। यदि केवल थोड़े से लोग सुनने से अनिच्छा प्रकट करें अथवा विद्रोह करें तो उसे अपने रास्ते पर अविच्छिन्न गति से चलते रहना चाहिये।

भाषण के बीच कभी-कभी एकाध अवसर ऐसे आ जाते हैं जिसे अपनाने से आप का बड़ा काम बनता है। देश की दयनीय दशा पर मैं एक बार भाषण दे रहा था। दवा-दारू की कमी पर दुःख प्रकट कर रहा था। एक आदमी सामने ही बैठा था, लगा जोर से खाँसने। उससे मैंने लाभ उठाया। उस आदमी का चित्र खींचा। यद्यपि सब लोग उसे अपनी आँखों से देख रहे थे और उसकी खाँसी कानों से सुन रहे थे, लेकिन हमारे मुँह से जो चरित्र-चित्रण हो रहा था, उसमें लोगों ने बड़ा मजा लिया। भाषण सजीव हो उठा, एक-एक बात ठीक बैठती गई।

कुछ देर बाद एक मोटर घर्र-घर्र, पों-पों करती हुई गुजरी। बड़ी बाधा पड़ी। आधा मिनट चुप रहा। फिर शुरू किया—इस प्रकार सारा धन मुट्ठी भर लोगों के हाथ में है। वे मोटर पर शोर मचाते, आप पर धूल उड़ाते चले जाते हैं; आप के काम में रुकावट होती है तो उनकी बला से। चट मैं मशीन युग की निंदा पर उतरा और सफल हुआ।

कौवे की कॉव-कॉव, दरवाज़े की खटखटाहट, आदमियों की भगदड, चिराग का बुझना, बच्चे का चीखना, माइक्रोफोन का फेल होना इन सारी दुर्घटनाओं से आप लाभ उठाइये। जरूर लाभ उठाइये। चूकिये नहीं। आप प्रत्युत्पन्न-मति की उपाधि पायेंगे। लोग हँसेंगे और आप के वाग्चातुर्य पर दंग रह जायेंगे।

भाषण जिस दिन देना हो उस दिन तो वक्ता को वैसे ही सतर्क रहना चाहिये जैसे परीक्षार्थी परीक्षा के दिन रहता है। अपने सारे नोट देख लीजिये, एक बार, दो बार, तीन बार। सभा में जाने से पहले एक बार और देख लीजिये और जाँच कर लीजिये कि आप को हर एक संकेत अच्छी तरह याद तो है न ?

भाषण देने के पहिले आप जितना ही शान्त रहें उतना ही अच्छा। यदि दौड़-झपटकर आप श्रोताओं को बैठाने लगे, कुर्सियाँ लगाने लगे, फर्श बिछाने लगे और इसी सरगर्मी में उठकर बोलने भी लगे तो आप अपने कर्तव्य का निर्वाह न कर पायेंगे। आपका चित्त एकाग्र होना चाहिये मानो आप पूजा पर जा रहे हो।

भाषण तो जैसे-जैसे तैयार कर लिया अब उसे कैसे याद रखें ? पूरे भाषण का रटना ठीक नहीं। अपने भाषण को कई भागों में बाँटिये—उसका विवेचन कीजिये। एक एक सकेत हर भाग का बना लीजिये। संकेत अति सूक्ष्म हो किन्तु साथ ही इतना व्यापक हो कि उसमें एक भाग के अंतर्गत प्रस्तुत सामग्री आ जाय।

इन संकेतों को याद कर लीजिये और उनको एक क्रम से रट लीजिये। यदि क्रम टूटा तो सारी इमारत ढह जायेगी।

संकेतों को नोट कर लेना और नोट की सहायता से बोलने को मैं बुरा नहीं मानता। श्रोता भी ध्यानपूर्वक सुनेंगे। वे समझेंगे आपने विषय को तैयार करने में बड़ी मिहनत की है, आपके प्रति उन्हे श्रद्धा होगी। नोट की सहायता से बोलने में आपको आसानी रहेगी। एक के बाद दूसरा संकेत और दूसरे के बाद तीसरा आता जायेगा। भाषण क्रम-बद्ध चलेगा। श्रोताओं को आपका भाषण सुनने और समझने मे आसानी रहेगी।

संकेत संकेत की तरह हों। पूरे वाक्य न लिखे हों। जिस समय आप बोलते हैं आपका ध्यान कई ओर रहता है। ऐसे वक्त नोट आसानी से नही पढ़ाई देता, ऐसा आप का अनुभव होगा। पूरा वाक्य पढ़ने के लोभ में आप को मिनट आध मिनट रुकना पड़ जायेगा।

एक सज्जन नोट लेकर मंच पर आना अपनी शान के खिलाफ़ समझते थे। उन्होंने सकेतों को याद तो किया नहीं, दस सकेतों को दस अगुलियों के नाखून पर लिख लिया। बोलते जाते थे और अंगुलियों का ओर देखते जाते थे। कुछ देर तक तो बोल ले गये। इसके बाद भाषण का क्रम टूट गया। उन्हें भूल गया था किस अँगुली तक बोल गये हैं, दो-एक अँगुली छोड़ गये। उन्हे नोट लेकर बोलने में कोई हिचक न होनी चाहिये थी। कम से कम शुरू के दिनों में नोट की सहायता से बोलना बहुत अच्छा है।

नोट कई पृष्ठों पर लिखा हुआ न हो। यदि कई पृष्ठों का नोट लेकर आप गये तो उन्हें ताश के पत्तों की तरह फेरते ही रह जायेंगे; फिर आप में और सड़क के किनारे खडे होकर तमाशा दिखानेवाले जादूगर में अंतर ही क्या रह जायेगा ? न तो नोट बहुत बड़े कागज पर लिखे हो, उसमें भी आपको सकेत ढूढने में नीचे ऊपर बार-बार देखना पड़ेगा, सुननेवाले कहेंगे आप अपनी जन्मपत्री पढ़ रहे हैं।

नोट पर अधिक से अधिक दस-बारह सकेत हों। एक कागज पर एक ही तरफ लिखा हो, बार-बार उलटना तो न पडेगा। एक बात का और ध्यान रखिये। जिस पाकेट में आप नोट रखें उसमें और कागज न हों। भरी सभा में जब आपको नोट की आवश्यकता हुई और आप अपने पाकेटों से बारी-बारी आठ-दस कागज निकाले, लोग आपको मदारी न समझेंगे, तो क्या समझेंगे ?

हमारे एक मित्र पाकेट मे नोट रखकर भाषण देने आये। कुछ देर तक वैसे ही बोल गये। जब नोट की आवश्यकता हुई तो लगे पाकेट टटोलने। कोट, कमीज, पतलून सब के पाकेट देख गये, बार-बार देखा, बड़ी अधीरतापूर्वक देखा मानो किसी बर्र ने डक मार दिया हो। नोट नहीं ही मिला। इधर-उधर की बोल लेने के बाद भाषण समाप्त किया। जब मुँह पोछना हुआ तो पाकेट से रुमाल निकाली। रुमाल से कागज का एक टुकड़ा गिर पड़ा, यही उनका नोट था, लेकिन अब हो ही क्या सकता था, मौका हाथ से खो चुके थे। आप अपना नोट सँभालकर रखिये, वह आपका पासपोर्ट है।

निस्सन्देह नोट लेकर आना और उसकी सहायता से भाषण देना खतरे से खाली नहीं है। सकेतों को याद कर लेना चाहिये और उनका क्रम भी याद कर लेना चाहिये। मैं अपने नोट अपने ढग पर याद करता हूं।

भाषण का प्रारंभिक भाग अच्छी तरह तैयार करके जाता हूँ। एक-एक शब्द नपा-तुला रहता है। श्रोताओं पर प्रारंभिक भाषण का प्रभाव ज्यादा पड़ता है। आपने देखा होगा, सभाओं में बहुत से लोग ऐसे पहुँचते हैं जो आगे जगह रहने पर भी पीछे बैठते हैं या खड़े रहते हैं। उनसे बैठने को कितना ही कहा जाय, बैठेंगे नहीं। जानते हैं, ऐसा वे क्यों करते हैं? उनके सुनने मे एक शर्त है। यदि वक्ता अच्छा बोले तो वे सुनेंगे, अन्यथा रास्ता पकड़ेंगे। इसी लिये वे पीछे की ओर रहते हैं, भाषण मे कोई आकर्षण नहीं तो खिसकने मे आसानी रहती है। जो लोग सामने बैठे होते हैं उनका निकलना हो मुश्किल है, सर ऊपर उठा-उठाकर चारों ओर देखते हैं। निकलने का कोई रास्ता नही। कभी-कभी तो पीछे खड़े होनेवाले आगे बैठे किसी आदमी को जोर-जोर से पुकारते हैं। बुरा लगता है लेकिन उठनेवाले को कोई रोक कैसे सकता है! इससे भी अधिक बुरा तब लगता है जब कोई अँगुली से इशारा करके किसी को बुलाने लगता है। सामने से बुलाये तो एक बात भी है, पीछे से भी लोग बुलाते हैं, भला किसी के पीठ पर भी आँख होती है!

ये सारे कार्यकलाप आपका भाषण बिगाड़ने को काफी हैं। भाषण का प्रारम्भिक भाग अच्छा पाकर जो लोग खड़े भी हैं, बैठ जाते हैं; जो घर जाने को उतावले हैं, जिनका खाना ठंडा हो रहा है, वे भी आ बैठते हैं।

अब कैसे आगे बढ़ा जाय। मेरे भाषण में जितने भी संकेत होते हैं, मैं उनका एक एक चित्र मन मे तैयार करता हूँ। कल्पना कीजिये मुझे दस मिनट तक भाषण देना है। विषय है 'कैसे खायें'। विषय बहुत सरल है। फिर भी तैयार किया। संकेत इस प्रकार तैयार किये:

१. भूख लगने पर खायें।

२. पका हुआ भोजन खायँ।
३. हल्की चीज खायँ।
४. धीरे-धीरे खायँ।
५. चबा-चबाकर खायँ।
६. वक्त पर खायँ।

मैंने एक वाक्य बनाया।

'भूख लगने पर पका हुआ हल्का भोजन धीरे-धीरे चबाकर वक्त पर खायँ।'

हमारा भाषण तैयार हो गया। उसके नोट तैयार हो गये। संकेत लिख लिये, उन्हें याद कर लिया।

आप कोई भी विषय लें। इस प्रकार विभाजन करें। संकेत तैयार कीजिये और फिर ऐसा एक या दो वाक्य बना लीजिये। संकेत तैयार करने और वाक्य बनाने में कुछ समय लगेगा और वह जरूरी भी है। उतने समय में संकेतों को आप बार-बार दुहरा भी लेते हैं। एक वाक्य में बैठाने के समय आपको थोड़ी सी परेशानी होगी। वाक्य को दो-तीन बार लिखना पड़ेगा। अंतिम बार लिखते-लिखते वाक्य याद भी हो जायेगा।

भाषण का प्रारंभिक अंश कुछ रोचक बनाना था। मैंने इसमें भी थोड़ा समय लगाया। तैयार हो गया, फिर मंच पर जाकर बोला—

हम जिन्दगी भर खाते रहते हैं। खाते-खाते मर जाते हैं, खाये बिना मर जाते हैं। क्यों मरते हैं? इसीलिये कि हमें खाने नहीं आता। चावल खाते हैं, दाल खाते हैं, रोटी खाते हैं, सब्जी खाते हैं और तो और हवा खाते हैं,' दिन-रात खाते ही रहते हैं। हजारों मन खा गये, लेकिन फिर भी खाने का ढंग नहीं आया। इत्यादि।

इतना सुनने पर श्रोता जो खड़े रहेंगे, थोड़ी देर के लिये बैठ

जाये गे। उन्होंने सुना इतना खाते हैं लेकिन खाने का ढंग नहीं आता, जरा सीखना चाहिये। खाने का ढग वक्ता ने यदि विषय की उपादेयता श्रोता को समझा दी तो श्रोता एकाग्रचित्त होकर सुनेगा। फिर पूरा भाषण सफल रहेगा।

भाषण के प्रत्येक अश को समझाते चलना चाहिये। इसके लिये उदाहरण देना अथवा किसी जानी हुई घटना से वर्णनीय विषय का सबध लगाते रहना चाहिये। भूगोल या इतिहास का विद्यार्थी अपनी पुस्तक में जब कोई स्थान पढ़ता है तो उसे एटलस पर देख लेता है। इससे पढ़ते समय बातें समझ में आती रहती हैं और साथ ही एटलस के किसी पृष्ठ के किसी बिन्दु से घटना को संबद्ध कर देने से उसका चित्र मानस पटल पर साफ उतरता है।

इस अवतरण को भी मैं उदाहरण से ही समझाऊँगा। 'कैसे खायें' वाले भाषण का पहला सकेत है 'भूख लगने पर खायें'। मैं एक लड़के को जानता हूँ जो हमेशा खाया करता है। दिन में ८ बार पाखाना जाता है। बीमार रहा करता है, दुबला-पतला है, जैसे डाक्टर बर्मन की शीशी पर की तस्वीर। मैंने इस सकेत पर बोलते हुये, उस लड़के की दिनचर्या का सक्षेप में वर्णन दिया और डाक्टर बर्मन की शीशी की तसवीर की याद दिलाई। शीशी की तस्वीर से अक्सर लोग परिचित हैं, बात बड़े मजे में सबके मस्तिष्क में बैठ गई।

आगे संकेत आता है 'धीरे-धीरे खायें'। मैं एक बार एक दावत में भोजन कर रहा था। हमसे थोड़ी ही दूर पर एक लड़का खा रहा था। उसके गले में एक हड्डी का टुकड़ा अँटक गया। उसकी आँखें निकल आईं, चेहरा लाल हो गया, छटपटाने लगा। इतने में एक आदमी ने उसकी गदन पर एक घूसा मारा। गोश्त का टुकड़ा १ गज़ आगे जा गिरा। यह मैंने अजीब दवा देखी। इस घटना को

भी कहना ज़रूरी समझा। इससे चबा-चबाकर खाने का महत्त्व समझ में आ जायेगा।

आगे चलकर हल्का भोजन का ज़िक्र आता है। मथुरा के चौबे लोगों के बारे मे तरह-तरह के किस्से मशहूर हैं। मैंने उसमें से एक किस्सा चुन लिया। इससे 'हल्का भोजन' के लाभ और 'भारी भोजन' के गुण स्वय प्रकट हो जायेंगे।

अब प्रश्न यह है कि 'दुबला-पतला आदमी,' 'बिना चबाकर खानेवाला' और 'मथुरा के चौबेजी' कैसे याद रहेंगे। मैं इन तीनों के एक जुलूस की कल्पना करता हूँ। सबसे आगे 'दुबला-पतला आदमी' फिर 'बिना चबाकर खानेवाला लडका' उसके बाद 'बड़ा पेट लिये चौबेजी'। सबके पीछे मैं। बारी-बारी जरूरत पड़ने पर मैं एक-एक की खबर लेता हूँ। आप किसी भी उद्धरण की कल्पना कीजिये उसका एक ऐसा चित्र आप तैयार कर सकते हैं।

आप हँसेंगे और कहेंगे कि यह बड़ी भद्दी कल्पना है। हाँ, है। इसी लिये तो याद रहती है और इसी लिये काम आती है।

भाषण के सकेत यदि होशियारी से तैयार किये जायें तो जिस प्रकार पुस्तक पढ़ते समय एक पृष्ठ के बाद दूसरा पृष्ठ खोलते जाते हैं, उसी प्रकार एक सकेत के बाद दूसरा सकेत याद आता जायेगा।

जिसे मच पर आने का शौक हो, जो अच्छा वक्ता बनना चाहता हो उसके लिये जरूरी है कि अच्छी स्मरण शक्ति रखे। कुछ लोग जन्म से अच्छी स्मरण-शक्तिवाले होते हैं, लेकिन जो ऐसे नहीं हैं वे अभ्यास करने से अच्छी स्मरण-शक्तिवाले बन सकते हैं। साधारण मनुष्य अपनी स्मरण-शक्ति का प्राय: ९० प्रतिशत बर्बाद करता है, यदि वह उसकी रक्षा करे तो कमाल हो जाय।

अध्याय ४

भाषण क्रिया

भाषण के हर पहलू को तैयार कर लेने के बाद आप भाषण देने के लिये तैयार हो जाइये। पर अभी बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ सामने हैं। आपको बोलना है और ऐसे ढग से बोलना है कि उसका प्रभाव पड़े। प्रभाव केवल बोली का ही नहीं पड़ेगा, आपका पहनावा, आपका व्यक्तित्व, आपकी शिक्षा-दीक्षा, आपका आचार व्यवहार, आपके एक-एक इशारे का पड़ेगा। यह सही है कि आप खुलकर अपने व्यक्तित्व, अपनी शिक्षा-दीक्षा तथा अपने आचार-विचार का परिचय श्रोताओं को नहीं देते, किन्तु उन्हे परिचय मिल ही जाता है। भाषण देते समय वक्ता का मस्तिष्क श्रोता के मस्तिष्क के साथ चलता है। वक्ता श्रोता की विचारधारा में सामञ्जस्य स्थापित हो जाता है और दोनों की हृत्तन्त्री भी साथ हिलती है। जब कोई कुशल संगीतज्ञ सितार बजाता है या तबले पर ताल देता है तो आपको अनुभव होगा कभी-कभी आप भी मस्त होकर झूमने लगते हैं। श्रोता जब सभा-मंडप से निकलते हैं तो कहते हैं—बड़ा सच्चा आदमी है। बड़ा सच्चरित्र है। बड़ा ऊँचा आदमी मालूम होता है। किसी-किसी के बारे में कहते हैं—बड़ा ढोंगी है। झूठे हाँकता है। वक्ता ने तो यह कहा नहीं था मैं झूठा हूँ। श्रोता समझ जाता है।

आपका कोई परिचित कोई बात कहता है, आप समझ जाते हैं यह किसकी आवाज है। आप समझा नहीं सकते किस प्रकार आपने आवाज़ ताड़ ली। उनके शब्दों ने आप पर एक विशेष प्रभाव

डाला है जो दूसरे के शब्द नहीं डाल सकते। हुबार्ड का कहना है कि विषय से बढ़कर शैली का प्रभाव पड़ता है। बात एक ही हो, अलग-अलग आदमी उसे अलग-अलग ढंग से कहेंगे। किसी का प्रभाव अधिक पड़ेगा, किसी का कम।

वक्ता जब मंच पर खड़ा हो तो उसे बिल्कुल सीधा खड़ा होना चाहिये, दोनों पैरों पर बराबर जोर होना चाहिये। उसे यह भी देख लेना चाहिये कि कहीं वह ऐसी जगह तो नहीं खड़ा है जहाँ से स्वाभाविक तौर पर दो-चार इंच इधर-उधर होने पर गिर जाने का डर है।

श्रोता की आँख के तेज का सामना करना साधारण आदमी का काम नहीं है। कोई आदमी सड़क पर गाना गाता चला जाता है, सैकड़ों आदमी सुन रहे हैं। उनमें से दस आदमी एकत्र हो जायँ और उसे रोककर कहें कि गाना सुनाओ तो संभवतः वह न गा सकेगा। अंतर क्या है? पहले उसके आगे एक भी आँख नहीं थी अब बीस आँखें घूर रही हैं। वक्ता भले ही श्रोता से आँख छिपाता हो, श्रोता वक्ता से आँख मिलाना ही चाहता है। विज्ञान की कृपा से लाउड स्पीकर द्वारा वक्ता का भाषण दूर-दूर तक लोगों को सुनाई देने लगा है, फिर भी श्रोता क्योंकर मंच के पास आने के लिये धक्कमधक्का करते हैं? वे वक्ता को देखना चाहते हैं। वक्ता को भी चाहिये कि वे श्रोता को देखते रहें। वक्ता अपने भाषण के बीच कभी-कभी इधर-उधर घूमकर श्रोताओं की ओर देख लिया करे। देखा-देखी से श्रोता वक्ता में पारस्परिक सहानुभूति उत्पन्न होती है। लाउड-स्पीकर काल में वक्ता सुगमता से घूम नहीं सकता, लाउड-स्पीकर से मुँह हटा कि गड़बड़ हुआ, आवाज़ ही नहीं जायेगी। फिर भी जहाँ तक बन पड़े वक्ता

अपने श्रद्धालु श्रोताओं की ओर कभी-कभी आँख फेरने की कोशिश करे। दस-पाँच मिनट के अंतर पर दस-बीस सेकंड के लिये रुककर ऐसा करना भी अरुचिकर न होगा। कुछ वक्ता किसी एक ही व्यक्ति की ओर अथवा एक ही दिशा की ओर देखते रह जाते हैं। श्रोता ऐसी स्थिति में वक्ता को अपने प्रति उदासीन पाकर स्वयं भी उदासीन हो जाते हैं। श्रोता किसी की ओर टकटकी लगाकर देख रहे हों और वक्ता श्रोता की ओर फूटी आँख देखे भी नहीं, यह कितनी अशिष्टता की बात है।

वक्ता जब बोलने खड़ा होता है तो उसके सामने एक बड़ी समस्या रहती है हाथों को कहाँ रखे। कुछ लोग दोनों हाथों को मेज पर टेक लेते हैं। यह बड़ी बुरी आदत है। हाथों को रखने के लिये कोई उचित स्थान न पाकर कुछ लोग उन्हें आगे या पीछे बाँध लेते हैं अथवा पाकेट में रखते हैं—कोट के पाकेट में, पतलून के पाकेट में, बंडी या कुर्ते के पाकेट में। हाथों का तो ठिकाना लग जाता है लेकिन वक्ता रेलवे-सिगनल की तरह खड़ा रह जाता है, न हिलता है, न डुलता है। हमारे एक वकील मित्र जब भी किसी से बात करते हैं, एक हाथ से कोट का एक बटन ऐंठा करते हैं। उनका यह बटन हफ़्ते में एक बार जरूर टूट जाता है। यह भी बुरी आदत है। महिला वक्ताओं को इस रोग से छुट्टी है, उनके कपड़ों में बहुधा ऐसे पाकेट हो नहीं जिनमें वे उलझ सकें। पर यह न समझिये कि उनके हाथ उलझते ही नहीं। मैंने एक महिला वक्ता को देखा, जिन्होंने अपने १५ मिनट के भाषण के बीच एक फूल की माला के एक-एक फूल और हर फूल की एक पंखड़ी को अलग-अलग कर डाला। मैंने एक दूसरी महिला वक्ता को देखा जिन्होंने अपने दोनों हाथों से खूब काम लिये। बार-बार वे अपनी धोती की छोर को गर्दन से उठाकर सर पर रखतीं और बार-

बार वह गिर आती। मैं समझ नहीं पाया कि वे किस फैशन की थीं—चोटी सर पर रखनेवाली अथवा गर्दन पर रखनेवाली।

एक मूछोंवाले सज्जन एक हाथ से अपनी मूछों पर बराबर ताव देते रहे। एक स्कूली लड़के से जब यह नहीं देखा गया तो उसने भी अपनी नाक के नीचे हाथ फेरना शुरू किया। वक्ता महोदय मात खा गये। एक दाढ़ीवाले सज्जन अपना एक हाथ बार-बार दाढ़ी में उलझाते और खींचते रहे, मानो जूयें पड़ गई हों, यह सब गदी आदतें हैं। कोई हाथ से सर खुजाता है, कोई उसे तोंद पर फेरता है। हाथ का कुछ न कुछ करते रहना स्वभाव है। इसमे कोई काम लीजिये अन्यथा आप जानें या न जानें, यह कुछ न कुछ करता रहेगा।

हाथों का यदि अच्छा उपयोग करे तो भाषण में जान आ जाय। किसी को ज़ोर से बुलाने की अपेक्षा यदि हाथ से इशारा कर दें तो अधिक प्रभाव पडेगा। यदि मुँह से पुकारे और साथ ही हाथ से इशारें करे तब तो और भी अधिक प्रभाव पड़े। किसी से कहें—मैं तुम्हे मारूँगा तो इसका असर उतना अधिक न होगा जितना घूसा दिखाने का होगा। हमें कहना है—ईश्वर एक है। यह कहकर सकेतिका अँगुली ऊपर दिखायी फिर कहना है—दोनों में दुश्मनी है। यदि दोनों हाथ की संकेतिका अँगुलियों को एक दूसरे के ऊपर तिरछे रखकर दिखाते हुए कहें तो कथन कहीं अधिक प्रभावकारी होगा।

हाथ के इशारे से हमारे कथन का समर्थन होता चलता है, दूसरे इससे श्रोता का ध्यान हमारी ओर खिचा रहता है। बातचीत में हाथ का इशारा हम हमेशा किया करते हैं। किसी दो आदमी को बातचीत करते देखिये वे अपने हाथ चलाते रहते हैं।

वास्तव में हाथों की एक स्वाभाविक गति है। यह सीखने-सिखाने की चीज़ नहीं। जब आप निडर होकर पर्याप्त आत्म-विश्वास के

साथ बोलते हैं तो हाथ स्वयं ठीक-ठीक ढंग पर चलते हैं। नकली तौर पर हाथ चलाना प्रकट हो जाता है। जरूरत से ज्यादा हाथ-पैर चलानेवाले को देखकर भ्रम होता है कि कहीं यह आदमी कसरत तो नहीं कर रहा है।

मेज पर हाथ पीटना आजकल वक्ताओं की बिरादरी में एक साधारण आदत हो गई है। इससे और कोई लाभ है या नहीं? एक लाभ अवश्य है। श्रोताओं का ध्यान धड़ाके के कारण खिंच जाता है और दो-चार सोते हुए श्रोताओं की नींद उचट जाती है। लेकिन इस धड़ाके से मेज पर रखी दावात, गुलदस्ता और माइक्रोफोन के उलट जाने का डर है।

हाथ ही नहीं शरीर के विविध अंग वार्तालाप तथा भाषण में काफी ज़ोर देते हैं। जब हम कहते हैं शाबाश, शाबाश तो हमारा सिर अनायास जरा ऊपर उठ जाया करता है। जब हम किसी शोक-पूर्ण घटना का जिक्र करते हैं तो सिर जरा झुक जाता है। जब किसी वीर की वीरता का चित्रण करते हैं हमारा सीना ज़रा उभर आता है। यह स्वाभाविक है, इससे विषय के प्रतिपादन में यथेष्ट सहायता मिलती है।

वक्ता का पहनावा क्या हो? कुछ नये वक्ता इसकी चिंता में रहते हैं। हमारे देश में कुर्ता, बंडी, पायजामा और चप्पल नेताओं की पोशाक कही जाने लगी है। आँखों पर अगर चश्मा रख दिया जाय तब तो फिर क्या कहना। वक्ता की कोई खास पोशाक नहीं। हाँ एक बात जरूर कहूँगा कि वक्ता सही पोशाक पहने।

श्रोता तीव्र आलोचक होते हैं। आपके गंदे कपड़े देखकर कह बैठेंगे—कोयले की गोदाम में काम करता होगा। गंदा जूता देखकर कहेंगे—दो पैसे पर कहीं पालिश करा लिया होता। बढ़ी दाढ़ी

देखकर कहेंगे—कोई सेकंडहैंड ब्लेड खरीदकर दाढ़ी बना ली होती। आपके पहनावे को वे बडे ध्यान से देखेंगे, गलती देखकर चुप बने रहे यह हो नहीं सकता। पहनावा ऐसा हो जो दूसरों को अच्छा लगे। एक सज्जन एक पैर में काला मोजा और दूसरे में लाल मोजा पहन कर मंच पर आये। श्रोता हँसने लगे। सबकी आँखे पैर की ओर खिंची थी। वक्ता ने नीचे देखा तो उसे गलती का पता चला। चट कहा—अभी क्या हँसते हो। ऐसा ही एक जोड़ा धोबी घर पर भी दे गया है। हँसी हुई और श्रोताओं को शान्त करने में सभापति को भाग लेना पड़ा। 'स्वरुचि भोजन पररुचि वस्त्र' को हमेशा याद रखना चाहिये।

पहनावे के सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने की है कि वक्ता जो पोशाक अक्सर पहना करता हो उसी पोशाक में मंच पर भी जाय। मलमल पहननेवाले अगर सार्वजनिक सभा में खादी पहन कर आयें तो वे अपने कपड़ो को ही सँभालते रह जायेंगे। जिसको गाँधी टोपी पहनने की आदत नहीं है वह अगर हैट पहनकर सभा में जाय तो संभव है उसे सर पर रखे ही बैठे (जो सभ्य समाज में अशिष्टता है) और उसे पहने ही बोले। यह भी सम्भव है कि उसे मेज पर छोड़ कर नङ्गे सर घर चला आवे। जब मैं जूता पहनकर पहले-पहल स्कूल गया तो उसे वहीं छोड आया।

सर पर बडे-बडे बाल रखना, उन पर हाथ फेरना या फुटबाल के खिलाड़ी के हेड मारने की नकल करते हुये बालों का फड़फड़ाना, यह वक्ता के लडकपन का द्योतक है। यदि बाल रहें तो अच्छी तरह सँवारे रहे। पुरुष वक्ताओं को तो इसका ध्यान रखना ही चाहिये, महिला वक्ताओं को और भी अधिक ध्यान देना चाहिये। जिसको अपने बाल काढ़ने की फुर्सत नहीं वह भाषण कहाँ तक तैयार

करके आया होगा ? लोग ऐसे वक्ताओं को लापरवाह कहा करते हैं।

भाषण मे वक्ता की आवाज का विशेष स्थान है। कुछ लोगों की आवाज़ मीठी होती है, कुछ लोगों की फटी हुई। फिर भी आवाज को हम अभ्यास द्वारा बना या बिगाड सकते हैं। इसके लिये कुछ विशेष प्रकार के आसन हैं और साँस की कसरतें हैं। एक साधारण कसरत हम बता सकते हैं जो आसानी से रोज़ की जा सकती है। इसमें प्रति दिन चार मिनट समय लगेगा।

सबेरे खुली हवा मे सीधे खडे हो जाइये, सीना उभरा हुआ हो, गर्दन सीधी हो, सर ऊपर को उठा हो। जम्हाई लीजिये, बहुत ज्यादा साफ हवा आपके फेफडे में आ भरेगी और गला कुछ समय के लिये बिलकुल खुला रहेगा। जितनी देर तक आप रोक सकें रोकिये। फिर जम्हाई लीजिये। गले से आ-आ-आ की आवाज निकालिये, जब तक आप निकाल सकें। फेफड़ा खूब फैला हुआ है और पसलियाँ बाहर की ओर निकली हुई हैं। ऐसा करने से आप साँस को ज्यादा देर तक रोक सकेंगे। गला साफ रहेगा और आप के भाषण में जितने भी शब्द आयेंगे, उनका पूरा उच्चारण होता रहेगा। इस कसरत के बाद कुछ बोलिये, आप को अपनी आवाज़ में मिठास मिलेगी।

दूसरी कसरत जो मैं बता सकता हूँ वह पीठ के बल लेटकर, सीधे बैठकर अथवा खडे होकर भी की जा सकती है।

मुँह से धीरे-धीरे साँस लीजिये—मन में गिनते जाइये १-२-३-४। फिर साँस को रोकिये और गिनिये १-२-३-४। साँस को बाहर निकालिये और गिनिये १-२-३-४। यह क्रम ५ बार तक चलाइये। दो दिन तक ऐसा कीजिये।

तीसरे दिन से यही कसरत करते समय हर स्थिति में १ से ८ तक गिनिये। रोज ऐसा करते रहिये।

बोलते-बोलते आदमी का गला बैठ जाता है। आवाज़ भारी आने लगती है और कभी-कभी तो बोलने में बड़ी कठिनाई मालूम होने लगती है। साधारण तोर पर हम दिन में कई घटे बातचीत करते हैं लेकिन गला नहीं बैठता। होली के दिनो मे फाग गानेवालों का गला बैठ जाता है, सार्वजनिक सभा मे भाषण देनेवाले वक्ता का गला बैठ जाता है। क्यों? कारण यह है कि गवैया और वक्ता घटों तक श्वासतन्तुओं पर असाधारण जोर देते हैं। उनकी साँस यद्यपि साधारणतः देर तक नहीं रुक सकती, बरबस रोकी जाती है। ऐसा करने में श्वासतंतुयें खिंच जाती हैं। जितना ही ज़ोर से वह बोलता है, जितना ही देर तक वह श्वास को रोकता है, उसका गला अवरुद्ध होता जाता है।

परिणाम-स्वरूप जब वह शब्दों का उच्चारण करने लगता है, शब्द के साथ श्वास निकालने की सा आवाज आने लगती है और शब्द साफ नहीं सुनाई पड़ता।

बोलते समय गले पर जितना ही कम जोर पड़े उतना ही अच्छा। इटली के गवैये इतिहास प्रसिद्ध हैं। कहावत है कि इटली के गवैये का गला होता ही नहीं। वे गले पर कभी जोर देते ही नहीं। वक्ता को भी गले पर जोर न देना चाहिये। फेफडे में बाहर से साफ हवा जाती है, खून को साफ करती है, फिर खून की गंदगी को लिए दिए बाहर निकाल आती है। फेफड़ा कारखाना है, गला चिमनी। कारखाने पर कितना ही ज़ोर पड़े, चिमनी पर कैसा?

हम जो भी शब्द निकालें पूरा और साफ। कुछ लोग लगते हैं ऐं ठ-ऐं ठकर-बोलने या अकारण मुँह को गोल बनाकर नाक या

गाल पिचकाकर बोलने की भी कुछ लोगों की आदत है। साधारण सभाषण मे जो लोग आदमी की तरह बोलते हैं वे भी मच पर आते ही आवाज मे कुछ बुजुर्गी लाने की कोशिश करते हैं यह ठीक नहीं। मंच पर भी वैसे ही बोलिये जैसे साधारण संभाषण में। श्रोता की सख्या के अनुरूप आवाज को तेज जरूर करना पड़ेगा। शब्द, चाहे वह एक आदमी के सुनने के लिये हो अथवा हज़ार आदमी के लिये, निर्विकार रहे। लायड जार्ज के भाषणों में यह विशेषता थी कि सुननेवालों से ऐसा लगता था कि वे हर एक से अलग-अलग बोल रहे हैं। महारानी विक्टोरिया को अपने प्रधान मंत्री ग्लैडस्टन से यह शिकायत थी कि वह उनसे बोलते समय इस ढंग से बोलता था, मानो सार्वजनिक सभा में बोल रहा हो।

भाषण और संभाषण में जब इतना साम्य है तो स्पष्ट है भाषण में वही सफल रहेगा जो सभाषण में रहता है। जो साधारण सभाषण में लापरवाह रहता है वह मच पर सफल न हो सकेगा।

कुछ लोग बोलते समय हकलाते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो साधारण संभाषण में ठीक बोल लेते हैं लेकिन मंच पर आते हैं तो हकलाने लगते हैं। ऐसे लोगों से प्रार्थना है कि वे मंच पर न आया करें। यदि आना हो तो पहले अपनी कमजोरी दूर कर लें। जिसको आत्म-विश्वास नहीं होता, जो हर आदमी के सामने बोलने में झेंपता है, वह हकलाने लगता है। किसी हकलानेवाले व्यक्ति की बोली की यदि कोई नकल करने लगे तो वह भी हकलाने लगेगा। हम एक ऐसे परिवार को जानते हैं जिसमें प्रायः, हर एक आदमी बुड्ढा, जवान या बच्चा हकलाता है। उसके घर की लड़कियाँ हकलाती हैं पर बहुयें नहीं हकलातीं। इसका कारण यह है कि उस घर के बच्चे बचपन से ही हकलाने की ट्रेनिंग पाते हैं। वे समझते हैं

यही स्वाभाविक बोली है। बड़े होने पर भी नही सुधारते। उसका एक पड़ोसी उन्हे चिढाने लगा, उनकी बोली बोलकर उन्हे छेड़ा करता था। साल दो साल बाद वह भी हकलाने लगा, फिर चिढाना छोड़ उनकी बिरादरी मे जा मिला।

हर ऐसे व्यक्ति को जो हकलाता है, मेरी सलाह है कि वह कहीं एकान्त मे जाकर खूब बोला करे। वह किताब या समाचार पत्र भी पढ़े तो बोल-बोलकर पढ़े। जो आँख से देखे उसे कान से सुन लिया करे। थोड़े दिनो में वह बेधड़क बोलने लगेगा।

भाषण की प्रारंभिक अवस्था में कभी-कभी वक्ता की हिम्मत छूट जाती है, हौलदिल सा हो जाता है, बात मुँह में है लेकिन उतरती नहीं। वह हकलाने लगता है। तब मन में ऐसा आता है कि बैठ जायँ, भाषण को तिलांजलि दे दे। निराश होने की कोई बात नहीं। आप धीरज रखिये। थोड़ी देर में आप रास्ते पर आ जायेंगे।

हकलाने से ही मिलता-जुलता एक और रोग है। घबराहट में हम कभी-कभी झट का पट बोल देते हैं। किसी वाक्य में दो शब्दों के स्थानों का परिवर्तन कर देते हैं। मुझे एक बार कहना था—हमारे देश में लाखों गाँव हैं। मैंने कहा—हमारे गाँव में लाखों देश हैं। बड़ी हँसी हुई। मेरे एक मित्र ने एक दिन अपने नौकर से कहा—हाथ लाओ पानी धोने के लिये। कहना चाहते थे—पानी लाओ हाथ धोने के लिये। आलू से चाकू काटो कई आदमी कह दिया करते हैं। घबरानेवाले भाइयो! घबराना छोड़ो, अन्यथा सभा में बड़ी हँसी होगी।

भाषण देते समय प्रतिपाद्य विषय को छोड़कर इधर-उधर न जाइये। बोलते-बोलते कभी-कभी ऐसा अवसर आ जाता है जब वक्ता सोचता है—जरा सा हटकर इस चुटकुले को पकड़ लें तो भाषण

में मज़ा आ जायेगा। ठीक है, पर ऐसे प्रलोभन से बचना चाहिये आपका लक्ष्य एक है, आपको नाक की सीधी में जाना चाहिये।

प्रतिपाद्य विषय मे वक्ता की कितनी निष्ठा है, इस पर भाषण की सफलता बहुत कुछ निर्भर है। आपको यदि अपने विषय में पूरा विश्वास है, आपका हृदय आपकी जिह्वा के साथ है तो श्रोता पर उसका असर पड़ेगा। विदेशी कपड़े पहनकर कोई स्वदेशी का प्रचार करे तो उसकी कौन सुनेगा? जो स्वयं हिंसक है, दुनिया को अहिंसा का पाठ क्या पढ़ायेगा? जो नंगा है दूसरे का तन ढकने की सलाह दे, हँसी की बात है। जब कोई मनुष्य अपनी मनोवृत्ति के अनुरूप बातें करता है तो उसकी बातों का साक्षी स्वयं उसका हृदय देता चलता है। उसकी आंतरिक भावनाओं के वेग के सामने सारी रुकावटें दूर हट जाती हैं। उसके भाषण में उसके व्यक्तित्व की झलक आती रहती है और अविश्रान्त प्रपात के समान उसकी जिह्वा से चुने चुनाये शब्द उतरते रहते हैं। वक्ता क्या बोल रहा है, उसका हृदय बोल रहा है। केवल अनुभूत सत्य।

महात्मा गांधी के भाषणों में यह विशेषता कूट-कूटकर भरी मिलती थी। देखिये :—

"आज हम आपस में झगड़ते हैं लेकिन झगड़ा करने के लिये फुरसत तो होनी चाहिये। जब हम काम में गिरफ्तार हो जायेंगे और सब मजदूर जैसे बन जायेंगे तब एक मिनट भी हमको न झगड़ा करने को रहेगा न किसी से मार-पीट करने का। खाना तो हमारे पास है। पहिनना, उसका भी हमारे पास इन्तज़ाम है। हम शराबखोरी छोड़ दें,। इस तरह से सिलसिलेवार हम सीधे चलते जाते हैं, तो मैं कहता हूँ कि पीछे कोई दोष ही हम में नहीं रहता। ऐसा अपने आप हम मालूम कर लेते हैं कि अब हम आपस में लड़ेंगे ही नहीं। न

कोई मुसलमान रहा न हिन्दू रहा। कोई बदमाशी करेगा, तो उसका जवाब हम दे देंगे। उसके साथ लड़ना है तो लड़ेंगे लेकिन आज हम क्यों बगैर मौत से मरना शुरू कर दें?

इसलिये तो मैं कहूँगा कि जो चीज़ मैंने आपको सिखा दी है और सुनाने की चेष्टा की है वह अगर अच्छी तरह से आपके दिलों में जम जाय, और उस पर चलने का फैसला हम करें तो मैं कहता हूँ कि हम बहुत ऊँचे चढनेवाले हैं। और हमें किसी की ओर देखना न पड़ेगा कि कोन हमे मदद देता है। हमे मदद किसकी चाहिये? मदद तो हमें ईश्वर देनेवाला है, और वह किसको मदद देता है? जो आदमी अपने आपको मदद देने के लिये खुद तैयार रहता है उसको ईश्वर मदद देता है।

गांधीजी के भाषण में आपको चमत्कारपूर्ण शब्दावली न मिलेगी। बातें साधारण होंगी लेकिन हृदय से निकलती हुई।

भाषण तैयार है। जनता के सामने उसे कैसे प्रस्तुत करें! केवल अपनी बात सुनना आपका कर्तव्य नहीं है, आपका कर्तव्य है एक एक बात को श्रोता के हृदय में बैठा देना। ऐसे बोलिये कि आपका कथन लोग सुनते समझते जायँ। जिस तरह भोजन धीरे-धीरे किया जाता है वैसे ही भाषण भी धीरे-धीरे दिया जाय। भोजन के बीच हम कभी-कभी जरा-ज़रा-सा रुक जाते हैं, एक चीज खाई फिर दूसरी चीज उठाने के पहले जरा-सा विलंब लगा दिया तो भोजन मे ज्यादा मजा आता है और आसानी से हज़म होता है। कुछ वही हाल भाषण का है।

कोई पुस्तक उठाइये। पुस्तक किसी खास विषय पर है। लेखक ने विषय के टुकड़े-टुकड़े कर दिये हैं। हर टुकड़े पर एक-एक अध्याय बनाया है। अध्याय का भी विभाजन है। जहाँ-तहाँ शीर्षक और

उपशीर्षक लगे हैं। लेकिन विभाजन अभी समाप्त नहीं हुआ। एक-एक उपशीर्षक में कई पैराग्राफ हैं। पैराग्राफ वाक्यों में बँटे हैं। वाक्य के अंत में पूर्ण विराम हैं और बीच-बीच में जहाँ-तहाँ और भी विराम हैं। ऐसा इसलिये करते हैं कि पुस्तक के पढ़ने और विषय को समझने में आसानी हो।

भाषण में भी इसी प्रकार विभाजन होना चाहिये। एक-एक विभाग पर अध्याय बना लिया। पुस्तक में तो अध्याय बदलते समय भरसक थोड़ी जगह छोड़ देते हैं, नये पृष्ठ मे प्रारभ करते हैं और मोटे अक्षरों में लिखते हैं अध्याय की संख्या और फिर उस अध्याय का विषय। पर आप भाषण के बीच ऐसा नहीं कह सकते कि अब अध्याय बदलता है अथवा अब हम विषय का अमुक अंश उठाते हैं। वक्ता को दूसरे उपाय से काम लेना होता है। विषय का एक अंश समाप्त होने के बाद और दूसरा अंश प्रारम्भ होने के पहले कुछ रुक जाइये लगभग आधा मिनट। श्रोता समझ जायेंगे हम एक मंजिल पार करके दूसरी मंजिल पर आ रहे हैं। एक ही अवतरण सुनते-सुनते जो ऊब गये हैं वे भी अपना दिमाग ताजा करके फिर से सुनने बैठ जायेंगे। जब आप प्रारम्भ करेंगे श्रोता समझ लेंगे आप अब कोई दूसरी बात कर रहे हैं। इसी तरह जब आप भाषण में शीर्षक बदलें तो थोड़ा सा फिर रुक जायँ—लगभग १५ सेकंड़ शीर्षक का नाम सुनाने की आवश्यकता नहीं। आपका भाषण स्वयं नाम की घोषणा कर देगा। जब भाषण में पैराग्राफ बदले तो थोड़ा फिर रुकिये—लगभग ५ सेकंड। पैराग्राफ के भीतर पूर्ण विराम आते हैं। हर पूर्ण विराम पर रुकिये—लगभग २० सेकंड। फिर अर्द्धविराम आते हैं एक सेकंड यहाँ भी रुकिये। विरामों का ध्यान रखकर बोलने से भाषण समझने में आसानी रहेगी। किस विराम पर कितना रुका जाय मैं इस सम्बन्ध में भी अपनी राय देता आया हूँ। वास्तव में यह वक्ता को

स्वयं निश्चय कर लेना चाहिये। कोई रुक-रुककर बोलता है कोई तेज, एक्सप्रेस कम ठहरती है और पैसिन्जर ज्यादा। यह आपका निजी मामला है।

भाषण के बीच कुछ ऐसे शब्द आते है जिन पर जोर देना चाहिये। हर एक शब्द का वजन बराबर नही होता जैसे—

जो आजादी हमें मिली है हमे उसकी रक्षा करनी चाहिये। हमारे सामने तरह-तरह की समस्याये हैं। हमे खाने को नहीं मिलता, हमें कपडा नहीं मिलता, यह नहीं मिलता, वह नही मिलता। हमें अपना उत्पादन बढाना चाहिये। हमारी समस्याओं का यह एकमात्र हल है। हम विदेशियों की तरफ कब तक ताकते रहे। हमें अपने पैर पर खडा होना चाहिये। हमारा आचरण एक आजाद नागरिक की तरह होना चाहिये।

साधारण सभाषण में हम कुछ शब्दों पर जोर देते चलते हैं। आश्चर्य है कि मच पर आते ही एक ही भाव सब शब्दों को तौलने लगते हैं यह हमारी कमजोरी है। हमे अपने भाषण में स्वाभाविकता लानी है। शब्दों पर तो जोर देते ही हैं, कभी-कभी आवश्यकतानुसार वाक्यांशों पर जोर देना पडता है। किन-किन शब्दो पर ज़ोर दें, कितना जोर दें, यह मेरे बताने की चीज नहीं है, आप जाने, आपके श्रोता जाने।

बातचीत के बीच हम आवश्यकतानुसार अपनी आवाज कभी नीचे गिराते हैं कभी ऊपर उठाते हैं। यह स्वाभाविक है, अनायास हम ऐसा करते रहते हैं। किसी की बातचीत दो चार मिनट तक सुनिये, आप देख लेंगे। हमें ऐसा करना किसीने सिखाया नही। लेकिन इसका प्रभाव अच्छा पडता है। सुनते समय कान पर जोर नहीं पड़ता और

न समझने में मस्तिष्क को ही परेशानी होती है। मंच पर आकर इस यह ढंग भूल न जायें।

नीचे के उद्धरण में रेखाङ्कित वाक्य को ज़रा आवाज धीमी करके पढ़िये :—

"जाते जाते अंग्रेज हिन्दुस्तान को दो टुकड़ों में बाँट गये। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान। बहुत खून बहाया गया। इन्सान ने इंसान के खून से होली खेली। एक ने दूसरे के घर को जलाकर दिवाली का उत्सव मनाया। वैमनस्य बढ़ा; और हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान के बीच गहरी खाई बन गई। यह खाई कैसे पट सकती है? विश्ववंद्य महात्मा गांधी के बताये हुये रास्ते पर चलने से। तब हम चैन की नींद सो सकेंगे। हमारे देश में धन-धान्य की वृद्धि होगी।

साधारण बात-चीत में हम बात-चीत की गति घटाते-बढ़ाते रहते हैं। कभी तेज़ रफ़्तार से बोलते हैं कभी कम रफ़्तार से। ऐसा करने से स्वभावतः संभाषण सजीव हो उठता है और हमारी बात-चीत के प्रमुख अंश साफ उभर आते हैं। यदि भाषण में भी हम ऐसा करें तो श्रोता का ध्यान खींचने में आसानी होगी। बड़े-बड़े वक्ता ऐसा करते आये हैं। लिंकन के बारे में कहा जाता है कि वह लगातार कई शब्दों को जल्दी-जल्दी बोलता था, तब ऐसे शब्द या वाक्यांश पर आता था, जिस पर उसे जोर देना था। तब वह उस पर अपनी आवाज देर तक रोकता था, फिर वह बिजली की तरह वाक्य को समाप्त कर देता था। वह एक या दो महत्वपूर्ण शब्दों पर इतना समय लगाता था जितना आधे दर्जन साधारण शब्दों पर।

अधोलिखित उद्धरण में देखिये रेखाङ्कित पदों को कम रफ़्तार से पढ़ने पर अभिप्राय कितना स्पष्ट हो जाता है—

"हमारा देश गरीब होता जा रहा है। हमारे यहाँ प्रति वर्ष १३० करोड़ रुपये का गल्ला विदेशों से आता है लेकिन इधर कोई ध्यान नही दे रहा है। महात्मा गाधी ने जब विदेशी वस्त्र के बहिष्कार का आन्दोलन चलाया तो हमारे देश मे ६० करोड़ रुपये का कपड़ा प्रतिवर्ष बाहर से आता था। लोगों ने गाधीजी की बात मान ली। महँगे दामों पर स्वदेशी खरीदा और विदेशी माल का आयात कम कर दिया। आज भी आवश्यकता है ऐसे आदोलन की ताकि हमारे देश का रुपया बचे और हम स्वावलबी हों।

'१३० करोड रुपये का गल्ला' धीरे-धीरे पढिये एक—सौ—तीस—करोड—रुपये का—गल्ला। ओह इतना अधिक गल्ला आता है। आगे '६० करोड़ रुपये का कपड़ा' कहना है उसे साधारण गति से कह गये। श्रोता को ६० करोड़ रुपया बहुत कम लगा। फिर सोचेगा इतने कम नुकसान के लिये तो गाधीजी ने जमीन आसमान एक कर दिया और एक—सौ—तीस—करोड—रुपये की किसी को खबर ही नहीं। वह खेत मे फावडा लेकर जा डटेगा और अन्न सकट दूर करेगा।

इसी भाषण को दूसरे ढग से पढिये। '१३० करोड़ रुपये का गल्ला' साधारण गति से पढिये और जहाँ कपड़ेवाला अश आता है वहाँ पढिये 'हमारे देश मे सा—ठ—करो—ड़—रुपये का—कपड़ा।' श्रोता इस '६० करोड' के सामने '१३० करोड' को तुच्छ समझेगा। कहेगा—सा—ठ—करो—ड़ का नुकसान था तब तो गाधीजी ने आन्दोलन चलाया था, आजकल तो कम नुकसान है। हम क्यों हाथ-पैर चलावे।

आप ख्याति-प्राप्त वक्ताओं के भाषण सुनें तो देखेगे कि वे कभी-कभी जान-बूझकर रुक जाते हैं यद्यपि वहाँ कोई विरामादि

नहीं हैं। बड़े वेग से जा रहे हैं, किसी वाक्य के बीच में ही रुक जायेंगे । तब कोई विशेष महत्वपूर्ण बात कहेंगे। बात कह लेने पर ज़रा सा फिर रुक लेंगे और तब अपनी साधारण गति पर फिर चल पड़ेंगे। भाषण के बीच एकाएक चुप हो जाने का प्रभाव वही पड़ता है जो एकाएक पटाखा फूटने का होता है। ध्यान खिंच आता है। हर आदमी मन्त्रमुग्ध की नाईं ध्यान लगाकर सुनना चाहता है कि देखें अब क्या कहा जानेवाला है । भाषण का महत्वपूर्ण अंश समाप्त हो जाने पर जरा रुक लेने से श्रोता को पर्याप्त समय मिल जाता है ताकि वह सुनी हुई बात को अच्छी तरह पचा ले। लिंकन की जीवनी लिखनेवाले का कहना है कि वह इस कला में बड़ा दक्ष था, जिस समय वह इस विधि से काम लेता था, श्रोताओं के हृदय हर लेता था। यदि विवेक के साथ हम खामोश हो जाया करें तो खामोशी में लाभ ही लाभ है। बोलना तो सबको कुछ-कुछ आता है, खामोश होना किसी को नहीं आता। सब लोग बोलना सिखाते हैं, हम बोलना तो सिखाते ही हैं, खामोश रहना भी सिखाते हैं।

निम्नलिखित भाषण को पढ़िये । एक बार साधारण गति और दूसरी बार ऐसे × निशान पर रुक-रुककर। आप को स्वयं अंतर मालूम हो जायेगा।

'अपने देश में अपना राज्य है'। × हमारे लाट हैं, हमारे प्रधान मंत्री और हमारे मंत्री। हमारे राजदूत विदेशों में हैं। वे अपना काम बड़ी योग्यतापूर्वक कर रहे हैं। हमें कुछ दूतावास अभी स्थापित करने हैं। विदेशों के राजदूत हमारे देश में हैं। × अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जो सफलता हमें मिली है वह हमारे राष्ट्र के कर्णधारों की प्रतिभा का प्रतीक है × पर अभी हमें बहुत कुछ करना है । देश की जनता बड़े कष्ट में है। लोग दाने-दाने को तरस रहे हैं। स्वराज्य व्यर्थ हुआ,

कष्टो का अपार सागर उमड़ पड़ा।×राम-राज्य का नाम तो आप ने सुना होगा। हमे राम-राज्य स्थापित करना है।× राम-राज्य मे किसी को कष्ट नही था। तुलसीदास ने कहा है ×—'राम-राज्य दुख काहु न व्यापा।'

अपनी रोक आप स्वयं अच्छी तरह बना सकते हैं। किसी भाषण मे जहाँ-जहाँ आप आज रुके, ठीक उन्ही जगहो कल उसी भाषण मे नही रुक सकते। अवसर के अनुरूप आपको रोक लगाना होगा।

भाषण मे कभी-कभी परिचित कवियों के पद अथवा सर्वमान्य नेताओ के कथन को दुहराना अच्छा होता है। एक तो ऐसा करने से आपके कथन को पुष्टि मिलती है, दूसरे आप किसी की बात कहने के पहले और बाद थोड़ा रुक लेते हैं। कोई बात कही, उसकी पुष्टि में कहा--गीता मे श्रीकृष्ण भगवान ने कहा है—थोड़ा रुक गये। फिर श्लोक कहा। श्रोता एक-एक शब्द को पकडने के लिये तैयार हैं।

अध्याय ५

मनोविनोद

किसी ने पूछा—'श्रोता अगर सोने लगे तो क्या करना चाहिये।'

'लाठी से पीटो'—जवाब मिला।

'सबको पीटे, या केवल सोनेवालों को?' फिर पूछा।

'नहीं, 'नहीं, केवल वक्ता को पीटो'—जवाब मिला।

और यह ठीक भी है। श्रोता क्यों सोता है? केवल इसलिये कि वक्ता उसको जगाता नहीं। मनोविनोद मे श्रोता जगा रहता है। रूखी-सूखी बात से सो जाता है।

क्लास में लडके क्यों सोते हैं? इसलिये कि मास्टर साहब उनके लिये मनोविनोद का कुछ सामान नहीं देते। उनके चित्त को हर लेने-वाली कोई बात नहीं कहते। लडकों का मस्तिष्क इधर-उधर घूमता है। फिर जब कोई आकर्षण नहीं मिलता तो लड़के सो रहते हैं, इसमें हर्ज ही क्या है।

एक लड़का क्लास में सोया करता था। स्कूल से निकलने के बाद कारोबार मे लग गया। बीस वर्ष के बाद उसे नींद ही न आती। दवा करते-करते जब हार गया तो उसे मास्टर साहब की याद आई। उनके क्लास में बैठ रहा। जम्हाई ली, और सो रहा। तब से वह अच्छा हो गया।

परम्परा से वक्ता शिकायत करता आया है कि श्रोता उसकी बातों में दिलचस्पी नहीं लेते, उसकी बात नहीं सुनते। श्रोता का ध्यान आकर्षित करना वक्ता का कर्तव्य है, ध्यान आकर्षित करे और अंत तक आकर्षित किये रहे। वक्ता को चाहिये कि श्रोता को साथ लेकर चले, यदि कहीं साथ छूटा तो फिर वही बात।

वक्ता रोयेगा।

और

श्रोता सोयेगा।

विषय के सर्वविधि सपादन और तर्कपूर्ण प्रतिपादन श्रोता को घर से खींचकर सभा-भवन मे ला सकते हैं। लोग बड़े-बड़े वक्ताओं के नाम सुनते ही अपनी दूकान मे ताले लगा रिक्शेवाले को चार आने पैसे देकर पार्क मे पहुँच जाते हैं। भाषण अच्छा लगा तो सुनेंगे, नहीं तो कोई पतला रास्ता देखकर निकल आयेंगे। यदि यह भी न हो सका तो सोयेंगे, टॉग फैलाने की जगह न मिले यह दूसरी बात है। ये ही स्कूल के लड़के और ये ही पार्क मे ऊँघनेवाले सिनेमा भवन मे बिलकुल नहीं सोते। कारण—कथानक प्रिय होता है और उसमें प्रहसन की मात्रा पर्याप्त होती है।

मनोविनोद होता चले तो दिमाग की ताजगी बनी रहती है। वक्ता का विषय तो श्रोता को आकर्षित करता ही है, उसका व्यक्तित्व भी आकर्षित करता है। वे वक्ता को पसन्द करते हैं अतएव उसकी बातें सुनते हैं। यदि कोई मौके की मनोरंजक कहानी सुनाई जाय तो वह विषय को समझने में और मदद देगी। श्रोता जब सभा से जाने लगेंगे तो भले ही और बातें भूल जायँ, वह कहानी याद रहेगी और उसके साथ वह विषय भी याद रहेगा जिसके

संबध में वह कहानी कही गई है। केवल गंभीर तर्कों से भरा हुआ भाषण प्रभावकारी नहीं होता। उसमें कुछ हास-परिहास के चुटकुले हों, कुछ छोटी-मोटी कहानियाँ हो तो गहरा प्रभाव पड़ेगा।

यह जरूरी नही है कि भाषण में हास-परिहास केवल कहानियों के द्वारा ही हो। सच पूछिये तो उच्चकोटि का मनोविनोद यह नही है। श्रोता को हँसाने और उसके दिमाग़ को समय-समय पर ताजा करने के लिये अच्छा यह होगा कि भाषण से स्वाभाविक ही कोई ऐसी बात निकले जिससे मनोविनोद हो। भाषण के भाव में और भाषण की भाषा मे हँसने-हँसाने का बहुत सा मसाला मिल सकता है।

यदि कोई चुटकुला या चुभती हुई कहानी आपको ऐसी मिल गई है जिसे आप अपने भाषण मे लाना ही चाहते हैं तो भाषण के स्वरूप को थोडा-थोडा बदलकर आप कहानी तक लाइये। ऐसा करने के लिये पहले से भाषण को तैयार कर लेना आवश्यक होगा और कहानी को कहाँ कैसे लावे, यह पहले से निश्चय कर लेना होगा।

हाँ, यदि लडकों की कोई सभा हो तो आप उनके सामने सीधे ही कहानियाँ लाकर रख सकते हैं, विषय से उनका मतलब हो अथवा न हो। कहानियाँ भी ऐसी जिसमें सारी बाते साफ़ खोलकर कह दी जायँ, लड़के के समझने के लिये कुछ छोड़ा न जाय। व्यंजनार्थ अथवा भावार्थ लक्ष्यार्थ उनके लिये नहीं है, वह तो बड़ी उम्र के लोगों के लिये है।

एक लडके से मैंने पूछा—कौन सी कहानी तुम सबसे अधिक पसन्द करते हो। उसने कहा—एक था कौवा। वह अपने मुँह में रोटी का टुकड़ा लिये पेड पर बैठा था। एक लोमड़ी ने उसे देखा और कहा, कौवा मामा तुम तो बडा अच्छा गाना जानते हो, जरा सुनाओ तो सही। कौवा फूलकर कुप्पा हो गया और काँव-काँव

करने लगा। रोटी का टुकड़ा गिर पड़ा। लोमड़ी लेकर चट कर गई।

मैंने इसके समकक्ष कई और कहानियाँ कहीं। उसने उनमे से कइयों को सुन रखा था फिर भी बड़ी दिलचस्पी के साथ सुना। बच्चे को प्रेमचन्द या रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कहानियों से कम प्रेम है। उसे लेखक का नाम न चाहिये, न कहानी के पात्रों के नाम चाहिये। उसे वही दादी नानी वाली कहानियाँ भाती हैं। एक था राजा........। एक था कुत्ता.......। आदि।

बच्चों के सामने अपने बचपन की बातें, और बचपन के अनुभव रखिये। वे आपके अनुभवों को अपने अनुभव के नजदीक पायेंगे, अतएव आपके जीवन से उनके जीवन में साम्य दिखाई देता है। वे आपको अपना समझेंगे और आपकी बातों को अपनायेंगे।

स्कूल के लड़कों के सामने बोलते हुए मैं अपने बचपन की आप-बीती जरूर सुनाता हूँ। एक बार मैंने कहा—

हमारे साथ सुकई नामी एक लड़का पढ़ता था। उसके घर साग-सब्जी बोनेका काम होता था। हम दोनों बाजार गये। वहाँ देखा नमक बिक रहा था। मैंने पूछा—क्यों भाई, नमक कहाँ होता है? सुकई ने कहा—हमारे घर नमक का खेत है। आलू, बैगन, पालक की खेती होती है, वैसे ही नमक की खेती होती है।

मैं उसकी बात मान गया।

लड़कों ने बड़ा मजा लिया।

कुछ अधिक उम्र के लड़कों के बीच ये कहानियाँ ये असर न दिखाये गीं। किशोरावस्था के लिये दूसरी ही कहानियाँ कहनी होंगी।

इस अवस्था मे लड़कों और लड़कियों की मनोवृत्ति का ठीक-ठीक पता लगाना, खेल नही है। आप उन्हे इधर-उधर की बातो से भुला नहीं सकते। वे पूछ सकते हैं—कहीं लोमड़ी बोलती है ? आपको मुँह की खानी पड़ेगी। उनके सामने उपदेश दीजिये तो वे ताली बजावे गे। उन्हे आप अपने बराबर समझकर बाते कीजिये।

श्रोताओं में से किसी का मजाक उड़ाना अच्छा नही। हर एक को अपने आत्म सम्मान की चिंता है। यों अकेले में किसी का मजाक उडा लीजिये, वह बुरा न मानेगा, बन पड़ा तो जवाब देगा। सार्वजनिक सभा मे यदि किसी का मजाक उड़ावे तो वह बुरा मान जायेगा। उसके मत्थे सब लोग हँसेगे। उसे हँसने का मौका न मिलेगा। हाँ यदि भरी सभा का मजाक उडाने की योग्यता आप मे हो तो कोई बुरा न मानेगा।

क्वीन्स कालेज बनारस के छात्रों का सम्मेलन था। एक छात्र भाषण देने उठा और कहा—'महारानी विद्यालय की छात्राओ! काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे विमेन्स कालेज है, शहर में गर्ल्स स्कूल है और कबीर चौरा मे लेडी हास्पिटल है। इन संस्थाओं मे केवल महिलायें आती है। क्वीन्स कालेज इस कोटि की चौथी संस्था है। यहाँ रानियाँ पढ़ने आती हैं।' असलियत यह थी कि सम्मेलन में कोई महिला थी ही नहीं। क्वीन्स कालेज में रानियों की कौन कहे लड़कियाँ तक नहीं पढ़ती थीं। फिर भी चूँकि यह मजाक सब पर लागू होता था, किसी को बुरा न लगा, सब ने बड़ा मजा लिया। यदि वही कोई किसी को बलियाटिक बुद्धू या बनारसी गुंडा कहकर संबोधित करता तो अंग्रेजी मिश्रित हिन्दुस्तानी मे गोत्रोच्चार होने लगता और हाथापाई की नौबत आ जाती। कुछ लोग ऐसे हैं जो सारी सभा का मजाक उड़ा सकते हैं। शिष्ट हास्य का सुन्दर स्वरूप प्रदर्शित कर सकते हैं। पर ऐसे लोग कम हैं।

कुछ लोग भाषण के प्रारभ में ही श्रोताओ को हँसी की पुडिया घोलकर पिला देते हैं। बलिया के प० चीतू पाडे एक बार प्रयाग में प० जवाहरलाल नेहरू की वर्षगाठ सबधी उत्सव का सभापतित्व करने गये। उन्होंने अपना भाषण प्रारभ किया :—

'जहाँ टडनजी और काटजू साहब ऐसे-ऐसे विद्वान् उपस्थित हैं, वहाँ मुझ जैसे मूर्ख को सभापति का आसन देकर आप लोग मेरी हँसी उडा रहे हैं। हमारे जिले के बी० ए०, एम० ए० के विद्यार्थियो को बलियाटिक कहकर चिढाया जाता है, भला मेरी क्या गत होगी जो दफा तीन मे ही फेल हो गया।'

सभा मे हर कोटि के लोग उपस्थित थे। आदि से अत तक पूरे डेढ़ घटे सब हँसते रहे। पाडेजी ने राजनीति की गभार बातों को नहीं रखा। साधारण ही बाते रखी, लेकिन ऐसे ढग से कही कि एक एक बात सब के दिल पर अङ्कित हो गई।

यह साधारण प्रतिभा का काम नहीं है। हर आदमी इसी प्रकार भाषण प्रारभ करने की कोशिश न करे।

स्वर्गीय प. रामचन्द्र शुक्ल शिष्ट हास्य के लिये प्रसिद्ध हैं। उन्हों-ने १९३५ मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन के २४वे अधिवेशन के हिन्दी परिषद का सभापतित्व करते हुये इस प्रकार अपना भाषण प्रारभ किया :—

माननीय विद्वज्जन !

आज मेरे ऐसे अयोग्य और अकर्मण्य व्यक्ति को इस आसन पर पहुँचाकर आप महानुभावों ने केवल अपने अमोघ कृपाबल का परिचय दिया है, यह कहना तो कदाचित् बहुत दिनों से चली आती हुई एक रूढि या परम्परा का पालन मात्र समझा जायगा। पर इसका प्रमाण आप को अभी थोड़ी देर में मिल

जायेगा। ऐसी जगमगाती विद्वन्मडली के बीच मेरा कर्तव्य केवल अपने दोनों कान खुले रखने का था, न कि मुँह खोलने का। पर आप लोग शायद इधर कार्य-भार से थककर कुछ विनोद की सामग्री चाहते थे। मूर्ख हास्य रस के बडे प्राचीन आलम्बन हैं। न जाने कब से वे इस ससार की रुखाई के बीच लोगों को खुलकर हँसने का अवसर देते चले आ रहे हैं। यदि मुझसे इतना भी हो सके तो मैं अपना परम सौभाग्य समझूँगा।

अपने को अयोग्य, अकर्मण्य और मूर्ख कहा किन्तु उनके समान योग्य, उनके समान कर्मण्य और उनके समान विद्वान् ढूँढ़े नही मिल सकता। इतने गभीर व्यक्तित्व का विद्वान् जब इतनी विनम्र बातें कहता है तो मनोविनोद तो होता ही, श्रोता के हृदय में उसके प्रति बड़ी श्रद्धा होती है। शुक्लजी ने जो भाषण दिया वह वास्तव मे उच्च कोटि की साहित्यिक रचना थी। न हर आदमी ऐसा भाषण दे सकता है और न वह भूमिका मे अपने को मूर्ख बताकर मूर्ख कहलाने से वञ्चित रह सकता है।

अतर्विश्वविद्यालय वाग्विवाद प्रतियोगिता मे एक प्रतियोगी ने बडे तिकडम से काम लिया। जब उसको बोलने के लिये बुलाया गया तो अपनी सीट से मच तक जल्दी-जल्दी आया और लँगड़ाता हुआ आया, बडी हँसी हुई। सामने सीधे खड़ा हुआ और आध मिनट तक कुछ न बोला। फिर कुछ अजीब ढग से मुँह बनाया। लोग फिर हँस पडे। भाषण के बीच भी कई बार हँसाया, विशेषता यह कि स्वय नहीं हँसा। लौटती बार बिलकुल नही लँगडाया। इस पर भी हँसी हुई। उसको एक पारितोषिक मिला। हमारा अनुमान है जज भी उसकी अनोखी शैली से प्रभावित हुए थे।

स्वय मूर्ख बनकर श्रोता का मनोरजन करना सचमुच मूर्खता की

बात है । यदि आप अपनी कला में दक्ष हैं, श्रोता की मनोवृत्ति से परिचित हैं तो ठीक है आप लोगों को हँसाकर आगे बढ़ेंगे । यदि आप मे थोड़ी सी भी कमी है तो आपका तीर चूक जायेगा । आपको बड़ी निराशा होगी, फिर रग जमाना मुश्किल होगा। अतएव केवल हँसाने के अभिप्राय से कोई बात कहकर भरसक भाषण प्रारभ न किया जाय । जब वक्ता श्रोता एक दूसरे को जान ले, कुछ दूर तक साथ चल ले, तब वे एक दूसरे के मनोरजन मे सम्मिलित हो सकते हैं । आपके मच पर आने के पहिले यदि कोई मनहूस वक्ता बोल गया है तो श्रोता की हँसने हँसाने की मनोवृत्ति नही रहती। यदि आप विनोद-पूर्ण ढग पर प्रारम्भ करेंगे तो श्रोता को हँसी ही न आयेगी ।

चर्चिल बहुत हाजिरजवाब था । जवानी मे वह मूछे रखता था । एक सहभोज के अवसर पर एक युवती ने कहा—मुझे तुम्हारी राजनीति और मूँछ दोनों से चिढ़ है । चर्चिल ने चट उत्तर दिया—घबराइए नही । आप इनमे से किसी के सपर्क में नहीं आ सकती ।

काशी के प० कातानाथ पाडे 'चोंच' एक कवि सम्मेलन मे अपनी रचना सुनानेवाले थे । सभापति ने नाम और उपनाम के साथ परिचय दिया । अच्छी हँसी हुई । किसी ने सम्भवत: उनका अनोखा नाम सुनने के लोभ से पुकारा 'परिचय परिचय' । किसी ने कुछ उत्तर न दिया । उन्होने फिर कहा 'परिचय, परिचय' । 'चोंच' जी से न रहा गया । उन्होंने कहा—परिचय ! कोई सम्बन्ध स्थापित करना है क्या ? खूब हँसी हुई ।

अच्छी हँसी वह है जो खुद आवे । भाषण के विषय से सबद्ध जो हास्य होगा वह उच्च कोटि का होगा, लादा गया न होगा । कभी-कभी सभा मे उपस्थित जनता और प्रस्तुत विषय से मनोरंजन की काफी सामग्री मिल सकती है । फौज के पुराने सिपाहियों की एक सभा हो

रही थी। उनमे से किसी ने कहा हमने फ्रास में इतने आदमी मारे। बेल्जियम में यह कमाल दिखाया। किसी ने कहा, हमने जर्मनी की पहली लड़ाई मे कई मोर्चे जीते। अत में मुझे बोलना था। मैं फौजी आदमी न ीं था। मैंने प्रारम्भ किया। 'मैं आपके सामने क्या बोलूँ, मैंने तो गीदड़ भी नहीं मारा। सिपाही हँस पड़े। मैंने आगे कहा—'लेकिन मैं मक्खी मार सकता हूँ; मैं एक घूसे मे पापड़ तोड़ सकता हूँ।' फिर क्या था सिपाही लोट पोट हो गये। उनके लिए हँसने का यह बड़ा अच्छा मसाला था। जैसा देव वैसी पूजा।

आप श्रोताओं को अपने पहले प्रयास में न हँसा सके, लेकिन इससे निराश न हो। बार-बार कोशिश कीजिये। कभी न कभी आप अवश्य सफल होंगे। एक बार जब हँसा लेंगे, तब से श्रोता आप की मामूली हँसी की बात पर भी हँसते रहेंगे।

वक्ता का कहना है कि भाषण देना कठिन काम है। श्रोता का कहना है कि भाषण सुनना कठिन काम है। और सचमुच दोनो काम कठिन हैं। एकाग्रचित्त होकर सुनने से शरीर पर जोर पडता है; शक्ति का ह्रास होता है। कोई कितना ही अच्छा भाषण क्यों न दे, श्रोताओं मे शायद ही कोई होगा जो वक्ता का हर एक शब्द सुनेगा। कुछ शब्द, कुछ वाक्य जहाँ-तहाँ छोड़ देगा। हाँ, खोफिया पुलिस का कर्मचारी, चूँकि वह सुनने और नोट करने के लिए वेतन पाता है, हर एक शब्द सुनने की कोशिश करेगा। लिखने की धुन मे बहुत सा अंश उसके कान में भी न आयेगा। यदि भाषण में हम अधिक दिलचस्पी लेते हैं तो कम अंश छोड़ेंगे, यदि कम दिलचस्पी है तो अधिक अंश छूटेगा; यदि दिलचस्पी बिलकुल नहीं है तो जैसा पहले कह चुके हैं, बैठे बैठे सोयेंगे। जब तक हम जागते रहते हैं हमारा ध्यान या तो भाषण पर रहेगा या अन्य किसी विषय पर। सोने पर बिलकुल छुट्टी मिल जा ती है।

खोफिया पुलिस के कर्मचारी की तरह यदि सब को कुछ मिला करे तो ध्यानपूर्वक सब सुनें। द्वितीय महासमर के दिनो में जब फौज की भर्ती जोरो पर हो रही थी और फौजी चन्दा वसूल किया जा रहा था, गाँवों मे सरकार की तरफ से जहाँ-तहाँ सभायें हुआ करती थीं। जनता को न फौज मे भर्ती होने से दिलचस्पी थी और न चन्दा देना ही किसी को प्यारा था। कोई आता ही न था। आते थे केवल पटवारी या देहात के छोटे-मोटे सरकारी कर्मचारी। बिचारे तनख्वाह पाने वाले। और आते थे कुछ जमीदार और सेठ। उन्हे राय साहबी की चिन्ता जो थी।

स्पष्ट है श्रोताओं का ध्यान आकर्षित करने के लिये केवल तिकड़म से ही काम न चलेगा, वास्तव मे उनकी रुचि के अनुरूप कुछ सदेश देना होगा।

दैनिक सभाषण मे हम बौद्धिक, मानसिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक विषयो को लेते हैं। मच पर जब वक्ता के सामने बहुत से आदमी हैं। उनको भी इन्हीं विषयों से अनुरक्ति है। किसी को किसी विषय मे ज्यादा किसी को कम। श्रोताओं मे से किसी एक को लीजिये, वह अपने विषय पर सुनना चाहेगा। यों लगे हाथ दो-चार इधर-उधर की सुनने को तैयार है, लेकिन अपनी बात उसे सबसे अधिक भायेगी। अनुरक्ति एक मनोविकार है जिसमे विचार को बल मिलता है। हम अपने मनोविकारों के प्रति उदासीन नहीं हो सकते।

हम केवल उन्हीं बातों की चिन्ता करते हैं जिनसे हमे निजी तोर पर मतलब है। सही या गलत हम सोचते हैं। हमारे चारों ओर दुनिया घूमती है, हमारे लिये दिन होता है, हमारे लिये रात होती है. हमारे लिये फूल उगते हैं, हमारे लिये हाट-बाजार लगते हैं। फिर जब हम भाषण सुनने जाते हैं तो क्यों न सोचें कि वक्ता हमारे लिये आता है।

आप हमारे बारे में बात कीजिये, हम ध्यान से सुनेंगे, अपने बारे में या किसी गैर के बारे मे मत बोलिये। हमे किसी से क्या मतलब। दो प्रेमी आपस मे बात करते कभी नही थकते। क्यों? इसलिये कि एक दूसरे के बारे में बात करते हैं। उन्हें दुनिया से क्या मतलब?

कुछ ऐसे विषय हैं जो सामयिक महत्व के हैं, उनमे कुछ-कुछ अनुरक्ति सब लोग लेते हैं। यदि आप को अपना विषय स्वय चुनने की सुविधा हो तो कोई सामयिक महत्व का विषय चुन लीजिये। बौद्ध-कालीन सस्कृति या महाभारतकालीन सभ्यता के विषय में यदि आपको कोई बोलने को निमत्रण दे तो सयोजक से प्रार्थना कीजिये कि केवल ऐसे ही लोगो को सभा-भवन मे घुसने दें जिन्हे उक्त विषयों से अनुराग हो।

चुनाव सबन्धी आन्दोलन में आप भाषण देने जाइये तो अपने निर्वाचन क्षेत्र की चर्चा कीजिये। टूटी सड़क दिखाकर आँसू बहाइये, उसकी मरम्मत कराने का वादा कीजिये। सिंचाई की व्यवस्था न होने से यदि फसलें सूख रही हो तो नहर निकालने या ट्यूबवेल बनवाने की प्रतिज्ञा कीजिये। सारे सूबे या देश की समस्याओं को हल करने की कोशिश मत कीजिये। सात सौ कोस पर आप सोना बरसावे, उससे किसी को क्या लाभ है। स्वर्ग मे तो घी-दूध की नदियाँ रात-दिन बह रही हैं।

श्रोता के साथ आप सहानुभूति प्रकट करे, इससे वे भी आप के प्रति सहानुभूति प्रकट करेंगे। श्रोता के साथ प्रेम कीजिये, सबको अपना समझिये तब वे आपको अपना समझेंगे और आपकी बात ध्यान-पूर्वक सुनेंगे।

वक्ता को चाहिये कि सभा में अपना पूरा परिचय दे। सभापति अथवा मंत्री अथवा सयोजक जो भी परिचय देनेवाले हों उनको अपना पूरा-पूरा परिचय दीजिये। उनसे प्रार्थना कीजिये कि वे सभा

में भी आप का यथेष्ट परिचय दे । प्रतिपाद्य विषय के प्रतिपादन की आप की क्या योग्यता है, यह भी बताइये । परिचय देनेवाले को चाहिये कि कम से कम समय मे परिचय दे । बहुत से परिचय देने वाले स्वयं वक्ता के विषय में कुछ नही जानते और न उससे कुछ पूछना चाहते हैं । परिचय के स्थान पर शब्दों का पूरा वाग्जाल फैलाते है । वक्ता को इससे सतोष हो सकता है, पर श्रोता को सतोष नहीं होता । परिचय करानेवाले के लिये श्रोता का व्यवसाय और पता आदि याद कर लेना तो आसान है, नाम ही याद करना कठिन है । वे नाम याद करने पर ध्यान ही नहीं देते । परिचय देने खडे होते हैं तब वक्ता का नाम बताने के समय भटकने लगते हैं । रमाकात के स्थान पर कृष्णकात कहते हैं, पाठक के स्थान पर पाडे कहते हैं, कभी-कभी वक्ता से पूछ बैठते हैं—क्या नाम कहा आपने ?

यदि परिचय करानेवाला अधिकारी वक्ता के नाम के प्रति इतना उदासीन है तो श्रोता क्यों न उदासीन होगा । अच्छा हो यदि वक्ता अपना नाम और परिचय पूरा-पूरा सक्षेप मे लिखकर दे दे ।

यदि आप श्रोता मे कोई इच्छा उत्पन्न कर सके तो आप सर्व-प्रिय वक्ता हो सकते हैं । इच्छाओं की पूर्ति के लिये हम जीते हैं, इच्छायें ही हमें जीवित रखती हैं । ये इच्छायें क्या हैं और कैसे ये उभारी जा सकती हैं, इसका अध्ययन आपको करना होगा । किसी सभा मे किसान बैठे हैं । उनके सामने समस्या है गल्ला उपजाने की । गल्ले की कमी से व्यक्ति और समष्टि का जो नुकसान हो रहा है, इस पर प्रकाश डालिये । गल्ला उत्पन्न करने की प्रबल इच्छा किसानों मे भरिये फिर इच्छा की पूर्ति के निमित्त उपाय बताइये । जिस समय आप श्रोता में यह इच्छा भर देंगे, श्रोता स्वयं आप से जानना चाहेगे कि क्या कोई उपाय भी है । आप उनमें गति ला सकते हैं, एक-एक क़दम आगे बढा सकते हैं ।

अध्याय ६

भाषण का प्रारंभ

मंच पर सफलतापूर्वक भाषण देने के लिये पहली शर्त यह है कि भाषण को अच्छे ढंग से प्रारंभ करें। भाषण के प्रारंभ में ही आप श्रोता से सम्पर्क स्थापित करते हैं। यह काम बड़ी चतुराई से करना चाहिये क्योंकि श्रोता पर आपकी जो पहली छाप पड़ेगी उस पर आप की सफलता निर्भर है। प्रारंभ के पाँच-सात वाक्यों से ही श्रोता आपके विषय में एक मत निश्चित करता है जो किसी न किसी रूप में भाषण के अंत तक चलता है।

अतएव प्रारंभ में ही भाषण विशेष रूप से आकर्षक होना चाहिये। घंटे दो घंटे के भाषण में आपको सैकड़ों बातें श्रोता के सामने रखनी हैं, सबसे अच्छी बात प्रारंभ में ही कहिये। एक-एक वाक्य चुना हुआ हो, एक-एक शब्द सजा हुआ हो और एक-एक अक्षर सुनहला हो।

भाषण तैयार करते समय प्रारंभ के कुछ वाक्यों पर विशेष ध्यान देना चाहिये। हमारा तो यह कहना है कि समस्त भाषण के तैयार करने में जितना समय लगे उसका तिहाई भाग भाषण के प्रारंभिक भाग को तैयार करने में ही लगाया जाय। जिस प्रकार मकान बनाने के पहिले नींव को अच्छी तरह जमा लेते हैं, वैसे ही भाषण का प्रारंभिक भाग 'सारे भाषण की नींव' है उसे सतर्कतापूर्वक तैयार करना चाहिये। नींव अच्छी तरह जम जाने पर सारा भाषण सफल रहेगा। वक्ता जब बोलने के लिये खड़ा होता है तो कुछ न

कुछ भय, कुछ झिझक, कुछ संकोच रहता ही है। हो सकता है उसके आरंभ करने से पूर्व कई वक्ता अपने मत प्रकट कर चुके हों, संभव है उसके पहले श्रोता किसी प्रकार के भावावेश में हों, यह भी संभव है कि उसके खड़े होने से पहले लोग जाने की तैयारी कर रहे हों। यह संकट काल है, बहुत सोच-समझकर कदम उठाने की आवश्यकता है।

भाषण में जो कुछ कहना हो उसका आभास पहले के कुछ वाक्यों में दे देना आवश्यक है। श्रोताओं के सामने एक आदर्श रख दीजिये और उसी की पूर्ति भाषण भर में कीजिये। जब आप भाषण दे रहे हों तो लोग यह समझने चलें कि आपका विषय क्या है। ज्यों-ज्यों आप बोलें लोगों को मालूम होता रहे कि आप एक-एक कदम अपने आदर्श की पूर्ति के निमित्त आगे बढ़ रहे हैं और जब आप बोल लें तो लोग समझें कि हाँ, वक्ता का उद्देश्य पूरा हो गया और भाषण समाप्त हो गया।

आदि काल से ही भाषण के तीन मोटे अंग बनाये गये हैं— आरंभ, मध्य और अंत। वक्ता पहले से निश्चय कर ले कहाँ से आरंभ करें, कहाँ अन्त करे। बीच का भाग भरना अधिक कठिन नहीं है। बहुतेरे वक्ता भाषण की भूमिका ही बाँधते रह जाते हैं। प्रस्तुत विषय की अवहेलना करके उसकी व्युत्पत्ति पर ही बोलते रह जाते हैं। समय थोड़ा रह जाता है तब अपने विषय पर आते हैं, समय बीत जाता है, विषय अधूरा रह जाता है।

आज श्रोता चाहता है कि आप झट अपने विषय पर आवें। वे इधर-उधर की नहीं सुनना चाहते। आपका अनुभव होगा कि सभा में बैठे हुये श्रोता किसी अच्छे वक्ता के भाषण के बीच नहीं उठते। वे उसकी एक-एक बात सुन लेना चाहते हैं। भाषण समाप्त

होने और दूसरे वक्ता के प्रारंभ करने के बीच जो समय मिलता है उसमे कुछ लोग उठकर अपना रास्ता लेते हैं। किन्तु इससे भी अधिक संख्या में लोग तब उठते हैं जब कोई वक्ता थोड़ा बोल लेता है। यह साधारण मनोवृत्ति है; वक्ता को श्रोता थोड़ा समय देता है। उसकी योग्यता और उसकी उपादेयता की परख कर लेता है। यदि उसकी समझ में बात ठीक जँची तो सुनेगा, नहीं तो दामन झाड़कर दस-पाँच श्रोताओं को लाँघते हुये सभा भवन से बाहर आ जाता है। बाहर आकर भी एक बार मुँह फेरकर देख लेता है कि क्या वक्ता में सुधार हुआ। यदि हाँ तो खड़े-खड़े भाषण को सुन भी लेगा, यदि नहीं तो उसके लिये रास्ता साफ है। उठनेवाले लोगों को वक्ता ज्यों-ज्यों बैठने को कहता है, वे अधिकाधिक विद्रोह करते जाते हैं। एक को बैठने को कहिये तो दो उठ खड़े होते हैं। ऐसे अवसर पर वक्ता को हमारी राय है कि वह लोगों के उठने-बैठने की फिक्र न करे। अपने भाषण को और सुधारकर श्रोता के सामने रखे। यदि बैठने-बिठाने के संबंध मे कहना जरूरी हो हो तो यह काम सभापति को अपने ऊपर लेना चाहिये। वक्ता अपनी बात कहे—सीधी, शुद्ध और स्पष्ट।

जैसा अध्याय ५ में कहा जा चुका है, विनोदपूर्ण भाषण अधिक आकर्षक होता है। प्रारंभ में ही ध्यान आकर्षित कराने के लिये विनोदपूर्ण शैली से काम लेना चाहिये। अव्यवस्थित जनता शान्त हो बैठेगी, उठाने से भी न उठेगी। आगे चलकर आप थोड़ा शिथिल भी हो जायँ तो कोई बात नहीं। वक्ता के मञ्च पर आते ही लोग उससे बड़ी-बड़ी आशायें बाँधते हैं। चाहते हैं कि वह जमीन-आसमान के कुलाबे मिला दे; चाहते हैं कि वह तारों को हाथ से तोड़कर श्रोता के सामने पेश करे, मानो वह मदारी हो।

किसी मदारी को कार्य आरंभ करते हुये देखिये। भले ही, वह जादू न जानता हो, भले ही जो दवायें वह बेचने के लिये लाया हो उल्टा असर रखती हों, पर वह बड़ी बुद्धिमानी से काम लेगा। पहले दवा बेचना शुरू न करेगा। वह जानता है दवा के नाम पर लोग भाग खड़े होंगे। दस वर्ष विलायत में पढ़कर आने पर भी डाक्टर लोग मक्खी मारते हैं। वह भगवान के नाम पर, खुदा के नाम पर, ईसा मसीह के नाम पर हज़ार क़समें खायेगा। जादू दिखाने का उपक्रम करेगा। एक पतले चमड़े को सामने फेंक देगा और उससे साँप बनाने का वादा करेगा। एक लड़के को ज़मीन पर लिटा देगा उसे उड़ा देने का वादा करेगा। चादर से उसे ढक देगा, उसकी पीठ के नीचे कमानी लगा देगा और मन्त्रों का उच्चारण करता जायेगा। लड़का उठेगा—एक फुट, दो फुट, तीन फुट। आप ताली बजायेंगे। यदि न बजायेंगे तो लड़कों से कहेगा ताली बजाओ। भीड़ जमा हो गई। कहेगा इसे हज़ार फुट ऊपर तक ले जाऊँगा। इस बीच एक दवा उठायेगा, उसकी तारीफ़ करेगा। उसे बेचेगा। लोग खड़े रहेंगे। वे तो लड़के का हज़ार फुट तक उड़ना देखना चाहते हैं। लगे हाथ दवा भी खरीदते चलते हैं। लड़का एक फुट और उठता है, फिर एक दवा उठाता है और बेचता है। अपनी दवाओं को बेच लेने पर लड़के को उतारता है, तब देखनेवाले हटते हैं। मदारी का उद्देश्य है दवा बेचना, दर्शक का उद्देश्य है तमाशा देखना। किन्तु मदारी ने अपने उद्देश्य को ऐसे ढंग से उपस्थित किया कि दर्शक जमे रह गये। उसने दर्शक के कौतूहल को समझा, उसकी प्रतिष्ठा की, उसे प्रोत्साहन दिया, उसका प्रतिपालन किया और तब अपना काम बनाया। कौतूहल सब में था जिसमें नहीं था उसमें भी जगाया। कुछ ऐसा ही उपाय आपको मंच पर आने पर करना होगा। श्रोता में कौतूहल पर्याप्त मात्रा में रहता है उसे और प्रोत्साहन दीजिये,

जिसमें कौतूहल न हो उसमें भी पैदा कीजिये—जादू से नहीं, धोखे से नहीं, अपने शब्दों से। श्रोता मन्त्रमुग्ध की नाईं आपकी बातें सुनेगा। अपने पहले वाक्य से ही कौतूहल उत्पन्न कीजिये, देखिये उसका क्या प्रभाव होता है।

महात्मा गांधी के एक भाषण का प्रारंभिक अंश देखिये :—

"एक सज्जन मेरे पास आते हैं, अच्छे हैं। वे देहरादून से आ रहे थे। ट्रेन में काफी आदमी थे। तो किसी स्टेशन पर, मैं स्टेशन का नाम तो भूल गया, उनके डिब्बे में एक आदमी आया। बाकी तो उस डिब्बे में सब हिन्दू थे, सिक्ख थे। किसी के हाथ में तलवार थी, किसी के छुरा था। उन्होंने नये आनेवाले को देखा। किसी ने पूछा कि आप कौन हैं?"

एक-एक वाक्य में कौतूहल कूट-कूटकर भरा है। कौन सज्जन आते हैं; कहाँ से आते हैं, किस स्टेशन की घटना है, कैसी घटना आगे कही जायेगी, यह डिब्बे में आनेवाला कौन है। श्रोता कौतूहल में डूब रहे हैं। एक-एक प्रश्न का उत्तर चाहते हैं। वक्ता ने उन्हें अपने हाथ में कर लिया है। कहाँ जायेंगे वे!

किसी विश्व-विख्यात व्यक्ति के किसी वाक्य को प्रारंभ में ही सामने रखने का कभी-कभी बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। एक तो स्वयं वह विचार ही उच्चकोटि का होगा, दूसरे जब आप ऐसे व्यक्ति को गवाही में रखते हैं तो आपके कथन की सत्यता अच्छी तरह प्रमाणित हो जाती है। साथ ही साथ श्रोता के विचारों में परिष्कार भी हो जाता है।

धार्मिक प्रवचन करनेवाला यदि भाषण के प्रारंभ में ही कहे—गीता में श्रीकृष्ण भगवान ने कहा है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थाय धर्मस्य सम्भवामि युगे युगे।

तो इसका बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ेगा। इसी श्लोक का यदि वह केवल अनुवाद सुनावे तो वह उतना प्रभावकारी न होगा।

खादी की महत्ता पर बोलनेवाला यदि यों प्रारंभ करे—विश्व की महती विभूति महात्मा गांधी कहा करते थे चरखे से गरीबों को रोटी मिलेगी, चरखे से नगों का तन ढकेगा—तो इसका बहुत प्रभाव पड़ेगा। यदि इन्हीं बातों को अपनी ओर से कहे तो लोग मन में तर्क-वितर्क करेंगे। कोई उसकी बात को मानेगा, कोई न मानेगा। प्रारंभ में एक ख्याति-प्राप्त व्यक्ति का, जिसे प्रस्तुत विषय पर बोलने का अधिकार हो, दो-एक वाक्य कह देना रामबाण सिद्ध होगा। आगे अपनी ओर से कहते रहिये। जब श्रोता ने पहली बात मान ली तो आगे की बात भी मान लेगा। साथ ही वह यह भी समझेगा कि आपका अध्ययन अच्छा है और विषय को तैयार करने में आपने समय लगाया है।

कुछ लोग सरस्वती, गंगा अथवा गणेश की स्तुति में एकाध श्लोक सुनाकर बोलना प्रारंभ करते हैं। कुछ लोग जोर से ओ३म् शब्द का उच्चारण कर लिया करते हैं। इससे बहुधा लाभ होता है। वक्तृता के प्रारंभ करने के समय यदि सभा में कोई अव्यवस्था हो, लोग शोर कर रहे हों तो कुछ समय के लिये शान्त हो जाते हैं।

कभी-कभी किसी वस्तु को सभा भवन में उपस्थित करने से श्रोताओं का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हो जाता है। मशीन युग की प्रशंसा में बोलनेवाला यदि अपनी कलाई की घड़ी की ओर संकेत करके घड़ी की उपयोगिता और मशीन की पूर्णता पर व्याख्यान दे तो आरंभ सफल रहेगा। देश की दुर्दशा पर भाषण देना हो, जनता की गरीबी का नग्नचित्र खींचना हो तो श्रोताओं में से किसी अर्द्ध-नग्न को

लीजिये और उसकी ओर संकेत करके उसी की दिनचर्या पर प्रकाश डालिये। घटे भर के भाषण से जो काम होगा वह उस अर्द्ध-नग्न की सूरत की सहायता से पाँच मिनट में हो जायगा।

श्रोताओं से प्रश्न पूछकर उसका उत्तर देना भाषण की सफलता की कुंजी है। श्रोता किसी सामयिक समस्या से संबद्ध प्रश्न को सुनकर उस पर वक्ता के साथ-साथ विचार करता है, फिर वक्ता के उत्तर सुनकर समस्या के हर पहलू को समझता है। ऐसा करने से श्रोता का मस्तिष्क वक्ता की बातों को सुनने के लिये बिलकुल खुला रहता है। कुछ लोग श्रोता से कहते हैं, आप प्रश्न पूछें हम उनका उत्तर देंगे। प्रश्न यदि ठीक है, वक्ता के कार्य-क्षेत्र से संबध रखता है तब तो ठीक है, यदि प्रश्न ऊटपटाँग है तो इस युक्ति से लाभ के बदले हानि होने की संभावना है। श्रोता ने यदि अपने को वक्ता का परीक्षक समझ लिया तो वक्ता बड़ी परेशानी में पड़ सकता है। हो सकता है किसी व्यक्ति ने ऐसा प्रश्न पूछ दिया जो वक्ता से न चले। हो सकता है किसी व्यक्ति ने किसी महत्वहीन समस्या को छेड़ दिया जिसका उत्तर स्वयं श्रोता को ही प्रिय न हो। हो सकता है कभी कोई प्रश्नकर्ता प्रश्न करने के बहाने से खड़ा होकर, आध घंटे का पूरा लेक्चर दे जाय। फिर वक्ता की उपयोगिता क्या रह गई। लेकिन सारी घटनाओं से अधिक आश्चर्यजनक मेरे देखने में, एक बार आई। युक्त प्रान्तीय सरकार के एक मंत्री प्रयाग में भारती भवन के सामने भाषण देने के लिये बुलाये गये। उन्होंने कहा आप लोग प्रश्न पूछें मैं उनका उत्तर दूँगा। किसी ने कोई प्रश्न भी न पूछा। परिणामस्वरूप सभा न चल सकी।

बहुतेरे अनुभवी वक्ताओं ने एक अलग रास्ता निकाला है। वे श्रोता की अनुरुचि से संबद्ध कोई चर्चा छेड़ते हैं। श्रोता जब अपनी अनुभूत बातों की चर्चा वक्ता के मुँह से सुनता है तो वह वक्ता के

हाथों पूर्णतया आत्मसमर्पण कर देता है। बात बड़ी छोटी सी है लेकिन बहुत थोड़े से वक्ता इसका उपयोग करते हैं। मानव जीवन के विविध व्यापारों से लगी हुई किसी व्यापक समस्या को मंच पर आते ही उठाइये। धन, जन, धर्म, राजनीति अथवा प्रेम संबंधी भावनाओं को जगाइये, लोग कहेंगे वक्ता ठीक हमारी बात कह रहा है, इसकी बात सुनने योग्य है। सबेरे के पढ़े हुये समाचार-पत्र में से कोई न कोई बात ऐसी अवश्य मिल जायेगी जिससे लोगों को विशेष संबंध हो और जिससे आपके व्याख्यान का विषय भी मिला जुला हो। समाचार में, मानवीय समस्याओं में और प्रतिपाद्य विषय में सामञ्जस्य स्थापित कीजिये, आप देखेंगे कि श्रोता आपके साथ हैं।

कभी-कभी भाषण के प्रारंभ में कोई आश्चर्यजनक बात कह देना श्रोताओं को आकर्षित करने में बड़ा सहायक होता है। मंच पर खड़े होते ही यदि आपने कहना प्रारंभ किया—हमारे देश में लोग दाने-दाने को मोहताज हैं। बंगाल के अकाल में ३५ लाख आदमी भूखों मर गये। मनुष्य मनुष्य के खून का प्यासा है। एक मनुष्य दूसरे को खाये जा रहा है।

बात सही है। सुननेवालों को आश्चर्य में डाल देती है। लोग ध्यान से सुनते हैं मानों डाक्टर उनकी बीमारी का नुस्खा समझा रहा हो।

पंडित जवाहरलाल नेहरू के एक भाषण का प्रारंभिक अंश देखिये। भाषण लखनऊ में हुआ था। लाखों आदमी उपस्थित थे। जमाना था साम्प्रदायिक उपद्रवों का। विषय था, 'साम्प्रदायिक एकता'। पंडितजी मंच पर आये। बोले—"जय हिंद।" जय हिंद मैंने आप से कहा। लेकिन किस हिंद की जय आप चाहते हैं, और कैसी जय चाहते हैं। आज मैं आप से कुछ प्रश्न करने आया हूँ

हूँ और कुछ उत्तर देने आया हूं। बहुत समय के पश्चात् मुझे अपने प्रान्त और अपने घर आने का अवसर प्राप्त हुआ है और मैं चाहता हूँ कि आपसे चार आँखें हों इसलिये कि एक दूसरे को हम एक सिरे से फिर समझें। एक कालान्तर हो चुकने के पश्चात् मैं आया परन्तु कभी-कभी ऐसा ज्ञात होता है कि जैसे युग बीत गये क्योंकि आखिर आप समय की चाल घड़ी से ज्ञात करते हैं और फिर कौम के तजुर्बे से करते हैं तो फिर यह एक लंबा ज़माना हो जाता है और अन्त में हम मनुष्य की मुसीबत से इसका अनुमान करते हैं। थोड़े से दिनों में बड़े-बड़े तजुर्बे होते हैं, कठिनाइयाँ होती हैं।

अगर हम इन बातों का अनुभव करें तो आपके लिये एक थोड़े से समय में एक संसार और युग बन जाता है। अगर इसके विपरीत समय सुख से व्यतीत होता है तो सौ दो सौ वर्ष निकल जाये तो भी नहीं मालूम होता। फिर इन दिनों में घटनायें हुई हैं। क्या उसका प्रभाव हम आप पर पड़ा है? क्या प्रभाव हमारे सूबे पर पड़ा? अगर भेड़-बकरी का सा जीवन व्यतीत करें तो मालूम नहीं होता। मैं आप से नियम और सिद्धान्त की बात नहीं करता परन्तु वह तो साधारण बातें हैं जिनका नियम और सिद्धान्त से कोई संबन्ध नहीं है। हमें इस समय क्या करना है, यह प्रश्न समझना है। आप में से बहुत सारे नवयुवक मुझे अपने पुराने साथी दीख पड़ते हैं। जब २७ वर्ष हुये हमारी आज़ादी की लड़ाई ने नया ढंग धारण किया था तब महात्मा गांधी ने एक नया मार्ग और ढंग दिखाया और हम सब मैदान में उतर आये। महात्माजी के बताये हुये मार्ग पर चलते रहे। इन २७ वर्षों में हज़ारों तस्वीरें और दीवारें हमारे सामने खड़ी हुईं, हज़ारों विपत्तियाँ और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा परन्तु धीरे धीरे हम रण-क्षेत्र में बढ़ते रहे। हमने बड़ी-बड़ी टक्करें अपने वैरियों से लीं। भारत एक पराधीन देश था और एक शक्तिशाली साम्राज्य के

अधीन था। एक समय था कि हम लोग ज़ोर से बोलते हुये डरते थे। स्वतन्त्रता का नाम भी नहीं ले सकते थे। फिर एक समय वह आया जब हमारे दीन देशवासी भी स्वाभिमानपूर्वक अपने देश को स्वतंत्र कराने और बड़ा-बड़ा टक्करें लेने के लिये उठ खड़े हुये थे जब हमारा देश पराधीन देश था और अब कहा जाता है कि भारत एक स्वतन्त्र देश है। यह कैसा स्वतन्त्रता है जब कि स्वतन्त्र स्त्री-पुरुष सभी अपना काम स्वतन्त्रता-पूर्वक न कर सकें। हम उस समय भी स्वतन्त्र थे जब अंग्रेज़ों का राज्य था। अगर हम इस समय की कठिनाइयों को दूर करने के लिये तैयार हो जायें और जो अनुचित बातें हम करते हैं अनुभव करें कि हम उनसे मिट जायेंगे। जो कठिनाइयाँ भारत के सामने हैं वे बड़ी विपत्तियाँ हैं। जो घटनायें भारत मे हुई हैं वे इतिहास में कम मिलती हैं। उनका सामना हमने गलत ढंग से किया हो या सही। रास्ते पर चले हों, ठोकर खाकर गिरे हों फिर भी हम आगे बढ़ते रहे। पहली बात हमें आपको समझाना है और समझना है यदि हम 'जय हिन्द' कहते हैं और हम एक स्वतन्त्र राष्ट्र बनना चाहते हैं तो हमको चाहिये कि हम स्वतन्त्र राष्ट्र के नागरिक बनकर कठिनाइयों का सामना करके करें। हाय-हाय करके नहीं। मैंने स्वराज्य को जनता का राज्य कहा है। केवल 'जय हिन्द' ही कहना काफी नहीं है, हमें अपने स्थान पर डटकर हर एक से टक्कर लेकर सिद्धान्त से विजय प्राप्त करनी है।"

इसके आगे पंडितजी ने देश की साम्प्रदायिक स्थिति पर प्रकाश डाला, देश की भी विविध समस्याओं का निरूपण किया, कुछ अंतर्राष्ट्रीय राजनीति पर भी कहा और लगभग एक घंटे के भाषण के बाद अन्त में कहा—"मारकाट और बरबादी की घटनाओं को हमें दूर करना है क्योंकि इससे अन्य देशों में हमारी बड़ी बदनामी

होती है। अन्त में मैं यही कहता हूँ कि हिन्दु मुसलमानों को जो वर्षों से एक साथ रहते आये हैं, एक होकर रहना पड़ेगा। जय हिन्द।"

जरा ध्यान दीजिये प्रारम्भिक वाक्यांशों पर। "जय हिन्द। जय हिन्द मैंने आपसे कहा लेकिन किस हिन्द की जय आप चाहते हैं और कैसी जय चाहते हैं।" 'जय हिन्द' अपेक्षाकृत नया शब्द है श्रोता इस शब्द की व्याख्या चाहता है उसमें इस शब्द के प्रति पर्याप्त कौतूहल है। फिर आगे कहा जाता है—किस हिन्द की जय और कैसी जय। उन दिनों हिन्द का निर्माण नया हुआ था, अंग्रेजों पर हम हाल ही में विजयी भी हुये थे। श्रोता भारत के प्रधान मन्त्री से 'हिन्द', 'जय' तथा 'जय हिन्द' की पूरी रूपरेखा सुनने को लालायित है।

इतना ही नहीं पंडितजी आगे कहते हैं—'मैं आपसे कुछ प्रश्न करने आया हूँ और कुछ उत्तर देने आया हूँ।' प्रधान मन्त्री प्रश्न करें और स्वयं उत्तर भी दें। श्रोता का कौतूहल और बढ़ा। उसे विश्वास हुआ प्रश्न देश काल के अनुरूप होंगे और उनका उत्तर जानना बड़ा लाभदायी होगा। सबके सब आकृष्ट हो गये। वक्ता में श्रोता की श्रद्धा और भी बढ़ गई।

पंडितजी फिर कहते हैं—बहुत समय के पश्चात् मुझे अपने प्रान्त और अपने घर आने का अवसर प्राप्त हुआ है और मैं चाहता हूँ कि आप से चार आँखें हों, इसलिये कि एक दूसरे को हम एक सिरे से फिर समझें। स्पष्ट है जिस समय वक्ता ऐसी बात करता है श्रोता को उससे अपार प्रेम हो जाता है। वह सोचता है—यह तो हमारे घर का आदमी है। हमारा भाई है। देश-विदेश में इसका नाम है। इस पर भारी दायित्व है। इसे बड़ा अनुभव है। घर के आदमी की देश और अनुभव की बातें सुनना कौन न चाहेगा? प्रस्तुत भाषण

में इस एक वाक्य ने वक्ता और श्रोता का दिल मिला दिया। फिर क्यों न श्रोता वक्ता की एक-एक बात को ध्यानपूर्वक सुनेगा और उसे याद रखेगा और उसके अनुरूप आचरण करेगा ?

वक्ता को यों तो पूरे भाषण में आत्म-विश्वास के साथ बोलना चाहिये, लेकिन शुरू में यदि पर्याप्त मात्रा में आत्म-विश्वास दिखाया जाय तो उसका बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ता है। आत्म-विश्वास के साथ बोलने का एक सुन्दर नमूना नीचे दिया जाता है—

फ्रान्स का सुप्रसिद्ध विद्वान् डिटरायट रूस में जाकर वहाँ की जनता को अपनी विद्वत्ता से चकित कर रहा था। रूसवालों के लिये यह एक प्रकार से खुली चुनौती थी। जार ने आयलर नामी गणितज्ञ को बुलाया और डिटरायट से भरी सभा में वाद विवाद करने को कहा। आयलर ने गम्भीरमुद्रा में पूरे आत्म-विश्वास के साथ कहा।
$\frac{अ + ब न}{न}$ = म इसलिये ईश्वर है। अब तुम्हें क्या कहना है।

डिटरायट ने केवल यही सुना था कि किसी गणितज्ञ ने गणित की क्रियाओं द्वारा ईश्वर की सत्ता को प्रमाणित किया है। बीजगणित वह बिलकुल न जानता था। इतने अधिक आत्म-विश्वास के साथ बीजगणित का समीकरण उपस्थित किया गया था कि वह भौचक्का रह गया, उसे कुछ कहते न बना। वास्तव में उस समीकरण का कोई अर्थ नहीं है और न तो उससे ईश्वर की सत्ता ही प्रमाणित होती है। जो कुछ था कहने के ढंग में था। डिटरायट-बेचारा हारा। इतना शर्मिन्दा हुआ कि वह दरबार में एक मिनट रुक तक न सका। झट फ्रांस लौट आया।

सुप्रसिद्ध कथावाचक बच्चू सूद जब भाषण देने के लिये

आसन पर बैठते हैं तो उनके हाव-भाव और मुखमुद्रा से असीम आत्म-विश्वास टपकता है। वे कहते हैं—हमारी जिह्वा पर सरस्वती बसती है। आप रामायण की कोई पंक्ति उपस्थित कीजिये। कहिये कौन सा अवतरण लूँ। आप समस्यापूर्ति के लिये कोई पद दीजिये। तत्काल उसकी पूर्ति करूँगा। वे अपने प्रयास में सफल होते हैं। उनका आत्म विश्वास सराहनीय है।

अध्याय ७

भाषण का अन्त

भाषण का अन्तिम भाग प्रारंभिक भाग से भी अधिक महत्वपूर्ण है। प्रारम्भ की गलतियों को तो आगे चलकर सुधार सकते हैं। किन्तु अन्तिम गलती को सुधारने का कोई अवसर ही नहीं मिलता। अन्त में जो कुछ कहा जाता है वह श्रोता को अधिक देर तक याद रहता है। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वक्ता जब बोलकर बैठ जाता है तो सभापति महोदय भी धन्यवाद देते समय भाषण के अन्तिम भाग का उल्लेख करते हैं। कारण स्पष्ट है पहले की बातें अधिकतर भूल गई हैं। अन्तिम बातें याद हैं।

भाषण को ऐसे व्यवस्थित करना चाहिये कि श्रोता को पता चलता रहे कि भाषण किस स्थिति पर है। साज पर जब कहीं गाना होता है श्रोता को पता चलता रहता है कि किस समय गवैया कहाँ है। स्थायी के बाद कहाँ अंतरा प्रारम्भ होता है, बहुधा वह जान जाता है। गाना समाप्त होते-होते जब अन्तिम ताल आता है तो सुननेवालों का सर एक साथ झटका देकर नीचे आ जाता है। हाँ, कोई बेसुरा गवैया हो तो बात दूसरी है। यही हाल भाषण का है।

भाषण तैयार करते समय अन्तिम भाग को बड़ी सावधानीपूर्वक तैयार करना चाहिये। पहले से अच्छी तरह निश्चित कर लें कि कौन सा विचार हमें अन्त में प्रस्तुत करना है। उसकी भाषा भी ठीक कर लें, उसमें परिमार्जन और संशोधन कर लें। वह खरा सिक्का हो।

उसे तो सब लोग अपने साथ लेकर जायेंगे। वह फेंकने की चीज नहीं, पास रखने की है।

हाँ, हो सकता है कि अवसर के अनुरूप आपको अपने भाषण में कुछ परिवर्तन करना पड़ा हो अथवा जो अन्तिम आभास आप देने आये हैं उसमें भी कुछ घटाने-बढ़ाने की आवश्यकता हो। ऐसा आप अवश्य करें किन्तु बड़ी बुद्धिमानी से। अच्छा हो अन्त में कहने के लिये दो-तीन तरह से तैयार होकर आइये। कोई न कोई तरीका उपयुक्त होगा ही।

बहुधा ऐसा अवसर आता है कि भाषण को छोटा करना पड़ता है। सभापति का एकाएक आदेश हो सकता है कि भाषण जल्द समाप्त किया जाय। कोई लब्धप्रतिष्ठ वक्ता आ टपके जिसको सुनने के लिये लोग लालायित हों। संभव है किसी तरफ से तेज हवा आ रही हो अथवा वर्षा आ रही हो। ऐसे अवसर पर वक्ता की तारीफ इसी में है कि भाषण को पूरा भी करे और उपस्थित परिस्थिति के अनुरूप जल्द समाप्त भी कर दे। सभापति की घंटी बज जाने पर अथवा उनका चिट पा जाने पर भी बहुत से वक्ता मंच पर इतमीनान से खड़े रहते हैं। वे कहते हैं—मुझे बहुत कुछ कहना था, लेकिन—एँ-एँ सभापतिजी की आज्ञा-एँ-है कि अब-अ-अ मैं समाप्त कर दूँ। तो-तो सभापति जी-ई-की आज्ञा है————। फिर भी मुझे यह कहना है एँ-एँ। लेकिन समय नहीं है। एँ-एँ-एँ और अ-अ तो अ—। इस प्रकार ३, ४ मिनट तक बोलते रहते हैं, लेकिन कोई नई बात नहीं कहते। यह बिल्कुल बेकार है। इसकी कोई जरूरत नहीं।

कुछ लोग ऐसा अवसर उपस्थित होने पर बड़ी तेज रफ्तार से भाषण के शेषांश को कहने लगते हैं। तीस-चालीस मिनट के लिये

तैयार की हुई सामग्री को तीन-चार मिनट के अन्दर उगलना चाहते हैं। एक ओर बोलते रहते हैं, दूसरी ओर हाथ से पीछे की ओर कुर्सी टटोलते हुये बैठने का उपक्रम करते हैं। इधर तो वे अधिकाधिक समय लेते जाते हैं उधर दिखाना चाहते हैं कि मैं तो बैठ रहा हूँ। पर साफ बात यह है कि न तो वे बोलते हैं, न चुप हैं, न खड़े हैं और न बैठे हैं। केवल सभा का समय काट रहे हैं। सबको बुरा लग रहा है। वक्ता को चाहिये कि जो बात कह रहा हो उसे पूरा कर ले, पहले कही गई-बातों में से दो तीन को दुहरा दे और फिर बैठ जाय। यदि पास में भाषण का नोट तैयार रखा हो तो ऐसे गाढ़े अवसर पर बड़े काम का सिद्ध होगा। उसे देखकर मोटी-मोटी बातें आसानी से कही जा सकती हैं।

बोलते-बोलते कैसे चुप हों, सचमुच यह एक समस्या है। अभ्यस्त वक्ताओं ने कुछ तरीके अपना लिये हैं। वे इस प्रकार हैं :

१. भाषण छोटा हो अथवा बड़ा, अंत में सारी बातों को संक्षेप में दुहरा देते हैं। वक्ता के लिये विषय जितना स्पष्ट है, श्रोता के लिये नहीं है। वक्ता बोलता जाता है, श्रोता बहुत सी बातों को भूलता जाता है। इसलिये अन्त में दुहरा देना अच्छा होता है। श्रोता के सामने आपने बहुत कुछ कह दिया है, भाषण में कुछ इधर-उधर की भरती की बातें भी आ गई होंगी। आप स्वयं श्रोता से यह आशा नहीं रखते कि वह हर बात को याद कर ले। सूत्ररूप में, केवल मोटी-मोटी बातों को दुहरा दीजिये, कूड़ा करकट छोड़ दीजिये। मैंने एक बार एक वक्ता को देखा। उन्होंने अन्तिम दो-तीन मिनटों में अपनी कही हुई खास-खास बातों को बड़े ढंग से दुहराई। दाहिने हाथ की अंगुली से बायें हाथ की अँगुलियों को बारी-बारी काटते गये और एक एक बात कहते गये। एक, दो, तीन, चार—कुल चार बातें। सबने याद कर लीं।

२. भाषण समाप्त करते-करते किसी खास उद्देश्य की ओर श्रोताओं का ध्यान आकर्षित करना बड़ा प्रभावकारी होता है। बौद्धिक विषयों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के भाषणों के अन्त में श्रोता के सामने एक अपील रखी जा सकती है उनमें क्रियाशीलता भरी जा सकती है और उन्हें एक लक्ष्य की ओर उन्मुख किया जा सकता है।

पंडित नेहरू के भाषण का अंतिम अंश जो पीछे दिया गया है देखिये। 'हिन्दुस्तान को किधर ले जाना है? इस समय हमें एक शक्तिशाली केन्द्र की आवश्यकता है क्योंकि बिना शक्तिशाली केन्द्र के शान्ति का बनाये रखना असंभव है और जिसके बिना कोई हुकूमत सफल नहीं हो सकती। मारकाट और बरबादी की घटनाओं को हमें दूर करना है क्योंकि इससे अन्य देशों में हमारी बड़ी बदनामी होती है। अन्त में मैं यही कहता हूँ कि हिन्दू मुसलमानों को जो वर्षों से एक साथ रहते आये हैं, एक होकर रहना पड़ेगा। जय हिंद। 'एक होकर रहना पड़ेगा' प्रधान मंत्री का यह संदेश गूंज उठा होगा। सारे भाषण का यह निचोड़ है, वक्ता का एक मात्र संदेश है, श्रोता भला इसे कैसे भूल सकते हैं?

युक्त प्रान्त की गवर्नर श्रीमती सरोजिनी नायडू ने सांप्रदायिक एकता पर बोलते हुये इस प्रकार भाषण समाप्त किया : हिन्दुओं को चाहिये कि वे अल्पसंख्यक लोगों के रक्षक बनें। उनको अपने मुसलमान भाइयों से प्राचीन परिपाटी के अनुसार मेल प्रेम के संबंध को दृढ़ रखना चाहिये और इस भाँति शान्ति बनाये रखना चाहिये क्योंकि शान्ति को बनाये रखना राज्य के लिये बहुत आवश्यक है।

अंतिम वाक्यांश गवर्नर का अंतिम संदेश है। यह संदेश अमर है, अमिट है। जनता इसे अपनायेगी, लेकर घर जायेगी।

३. यद्यपि यह कोई ज़रूरी नहीं है, वक्ता को चाहिये कि भाषण समाप्त करते समय श्रोता को धन्यवाद दे । किन्तु यह धन्यवाद का प्रकाशन एक दो वाक्यों तक सीमित रहना चाहिये । यदि वक्ता ने भाषण के प्रारंभ में श्रोता को धन्यवाद दिया है तो अंत में धन्यवाद देना आवश्यक नहीं ।

४. कुछ वक्ता भाषण के अंत में किसी कवि का कोई पद अथवा किसी सर्वमान्य नेता का कोई वाक्य दुहराते हैं। यह बड़ा सुन्दर तरीका है पर शर्त यह है कि पद अथवा वाक्य जो कहा जाय वह अवसर के अनुकूल हो । पद का अर्थ यदि हर एक आदमी की समझ मे आने लायक न हो तो थोड़े मे उसका अर्थ भी समझा दिया जाय । अधिक देर तक समझाने मे भाषण फिर लचर हो जायेगा ।

स्वराज्य आन्दोलन के दिनों मे विदेशी शासन की घंटों तक निन्दा करने के, बाद एक वक्ता ने तुलसीदास की यह चौपाई सुनाई-—
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृप अवसि नरक अधिकारी ।
भाषण का प्रभाव चौगुना बढ़ गया ।

५. श्रोता को यदि हँसते हुये छोड़ा जाय तो इससे भाषण में बडी रोचकता आ जाती है। पर याद रखिये कोई कहानी कहकर हँसाया और तत्पश्चात्‌ भाषण समाप्त कर दिया तो इसका असर उल्टा होता है । कहानी मूल विषय को ढक देती है ।

६. कुछ वक्ता भाषण समाप्त करके श्रोताओं को कुछ समय देते हैं कि वे प्रश्न करे । फिर वक्ता प्रश्न का उत्तर देता है ।

यदि प्रश्नोत्तर से भाषण समाप्त करना हो तो श्रोताओं को इसकी सूचना पहले से हो दे देनी चाहिये । वे भाषण को ध्यान से सुने गे और प्रश्नावली तैयार करते जाये गे । अन्त मे प्रश्नावली माँगिये,

केवल ऐसे ही प्रश्न माँगिये जिनका आपके विषय से सबंध हो। इधर-उधर के प्रश्नो का, भले ही आप उत्तर जानते हों, उत्तर न दीजिये। प्रश्न लिखकर माँगना अच्छा है। बोलकर प्रश्न करने का मौका देने पर दो, तीन, चार आदमी साथ बोलने लगते हैं। सभा में अव्यवस्था हो सकती है। ऐसा करने में एक और खतरा है। कुछ मनचले प्रश्नकर्ता खड़े होकर अच्छा खासा लेक्चर देने लगते हैं। इतना ही नही मच पर आकर माइक्रोफोन द्वारा बोलना चाहते हैं। यदि आपने ऐसा होने दिया तो घंटों तक भाषण देकर जो रग आप चढ़ा चुके हैं उसे प्रश्नकर्ता पाँच मिनट मे फीका कर देगा।

७. भाषण समाप्त करने का मेरा ढंग कुछ अलग ही है। मुझे इससे सफलता मिलती है, सभव है अन्य वक्ताओं को भी मिले। भाषण प्रारंभ कीजिये और सारी बात कह जाइये। जब समाप्त करने का समय आवे तब भी अपनी मुख-मुद्रा अथवा हाव-भाव से यह लक्षित न होने दीजिये कि आप समाप्त कर रहे हैं। न तो आप कुर्सी टटोलें और न बगलें झाकें। ठीक ऐसे समय जब आप वेगवती धार की तरह आगे बढ़ रहे हों भाषण समाप्त करके बैठ जाइये। श्रोता आवाक् रह जायेगा, वह सोचेगा वक्ता कुछ और कहता तो अच्छा हुआ होता। यदि श्रोता में ऐसी उत्कंठा आप छोड़ जाते हैं तो आपकी बड़ी प्रशंसा होगी।

अध्याय ८

बाधाओं का निराकरण

वक्ता के सामने अनेक प्रकार की बाधायें उपस्थित होती हैं। यदि वह उन्हे न सँभाले तो संभव है जबर्दस्त नुकसान उठाना पड़े।

बहुधा ऐसा होता है कि वक्ता बड़ी उम्मीदें बाँधकर सभा-भवन में जाता है, किन्तु वहाँ सुननेवाले मुश्किल से १०-२० हैं। कभी-कभी तो न सभापति का पता है और न सयोजक का। इससे वक्ता को निराश न होना चाहिये। संयोजक अथवा सभापति की आज्ञा पाकर उसे भाषण प्रारभ कर देना चाहिये। सभा-भवन मे जो लोग इधर-उधर बैठे हों उन सबों को सामने एक जगह लाने की कोशिश करनी चाहिये। थोड़े से लोगों के सामने आपसी बातचीत के तौर पर भाषण देना चाहिये। केवल ऐसी ही बातें कही जायँ जिनके विषय मे वक्ता को पूर्ण निश्चय हो और जो बिना तर्क के अपनाई जा सकें। श्रोता यदि थोडी सख्या में हैं तो वे सब के सब एक नंबर के आलोचक हैं। आपको हर बात पर रोकने का अधिकार रखते हैं। बड़ी सभा मे श्रोता जल्दी रोकने का साहस नहीं करता।

यदि आपको ऐसी सभा में बोलने का अवसर मिले जहाँ सब लोग आपके विचारों से असहमत हैं तो आपको बड़े धीरज से काम लेना होगा। आप अपने विषय में पूरी आस्था रखे और डरें बिल्कुल नहीं, जो थोड़ा-सा भी डरा वह गया। श्रोता आपकी एक बात सुनना नहीं चाहते, वे जानते हैं कि आपका बोलना उनके स्वार्थ को चोट पहुँचाता है, पर आपको बोलना है ही। यदि आपने क्रोध दिखाया

अथवा आप तैश मे आगये तो सारा मामला बिगड़ सकता है। विरोधियों को सभा में बोलने का अवसर बड़े भाग्य से मिलता है। इसे खोना न चाहिये। पर ऐसी सभा में लोग सुनने को तैयार हैं ही नहीं। आपका काम यह भी है कि उन्हे सुनने के लिये तैयार करें।

बहुत आत्म-विश्वास के साथ गभीर आवाज़ में आप कहिये—हमारा सिद्धान्त है कि किसी भी विषय को समझने के लिये हम उसके हर पहलू पर विचार करे (आवाज—नही, नहीं)। गुड की मिठास का पूरा आभास पाने के लिये नीम का कड़वापन जान लेना ज़रूरी है। हमें भगवान ने बुद्धि दी है (आवाज-नहीं, नही)। मेरा अभिप्राय है आपको भगवान ने बुद्धि दी है, आप क्योंकर इनकार करते हैं (नहीं, नहीं; बैठ जाइये)। सोचना-विचारना हमारा धर्म है। मैदान में आइये, हमारे साथ-साथ आप भी विचार कीजिये। सुहराब मज़बूत है या रुस्तम इसका पता बगैर मैदान मे आये कैसे चलेगा? श्रोता अब चुप हैं। सुहराब रुस्तम के क़िस्से को जरा देर और बढ़ाइये। कोई न रोकेगा। फिर अपनी बात पर आइये। जब श्रोता छेड़े तो कोई चुटकुला पिला दीजिये। वह चुप हो जायेगा। हमारा अनुभव है कि ऐसे अवसर पर कथा-कहानी—सो भी ऐतिहासिक या पौराणिक-बड़े काम की सिद्ध होती है। वह कहानी तो किसी एक की नहीं। सब लोग ध्यानपूर्वक सुनते हैं। यदि आप में प्रतिभा होगी तो एकाध क़िस्से-कहानी का पर्दा देकर अपनी सारी बात कह सकते हैं।

पार्टी बाजों के जमाने में और चुनाव के चक्कर मे आपको बहुतेरी ऐसी सभाओं में बोलने का अवसर मिल सकता है। यदि आप में पर्याप्त आत्मविश्वास है तो बोलिये अन्यथा मिले हुये अवसर को भी छोड़ दीजिये। आप अपनी अलग सभा कर लीजिये। वहाँ अपने ढंग पर बोलिये।

यह तो हुआ विरोधी सभा के रुख की बात। हो सकता है कि आप द्वारा आयोजित सभा में कुछ लोग ऐसे आ जायँ अथवा पैदा हो जायँ जो आपकी बात सुनने को तैयार न हों। राजनीतिक सभाओं में इन दिनों, जब कि राजनीतिक चेतना का प्रादुर्भाव हो रहा है, ऐसे बाधकों का उत्पन्न होना कुछ आश्चर्य की बात नहीं।

बाधक कुछ तो बने-बनाये होते हैं, केवल बाधा डालने के अभिप्राय से आते हैं। कुछ बाधक वक्ता के भाषण से उत्पन्न होते हैं। प्रश्न करने के नाते अथवा जैसे भी हो, वे बाधा डालते रहेंगे।

१९३१ की बात है। बलिया की एक सार्वजनिक सभा में भगतसिंह की मृत्यु पर शोक प्रकट किया जा रहा था। एक बाधक ने दो-तीन बार वक्ताओं के भाषण के बीच खड़े होकर बाधा डाली। शोक प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास होते-होते रह गया। वह विरोध में उठ खड़ा हुआ। दूसरे साल उसका लड़का पुलिस सब-इन्सपेक्टर के चुनाव में सफल रहा। स्पष्ट है वह बाधा डालने के अभिप्राय से आया था।

१९४३ की बात है। आगरे के एक हाई स्कूल के वार्षिकोत्सव में स्कूल के मंत्री महोदय अपने बाप-दादा द्वारा दिये गये दान की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। दादा ने इतने रुपये दिये, पिताजी ने इतने कमरे बनवाये आदि कह ही रहे थे कि एक आदमी बोल उठा—आपने कितने कमरे बनवाये। वे तारीफ करते ही रहे। अपनी माँ के नाम पर बने हुये हाल का जिक्र किया। फिर उसी आदमी ने कहा—अपने नाम एक घुड़साल भी बनवा दिया होता। इस बार मंत्रीजी ने कानों से आवाज सुन ली और सुधार कर लिया। अच्छा हुआ उन्होंने अपनी प्रशंसा नहीं की। यह बाधक सभा में ही पैदा हुआ था।

मंत्रीजी का बनना, उनका अहंकार, उनका खोखलापन उससे न देखा गया।

चुनाव संबधी एक सभा मे मैंने देखा दो-दो तीन-तीन करके आठ-दस आदमी यहाँ-वहाँ बैठ गये। उन्हे छेड़ने की कोई बात न मिली तो कहने लगे—जोर से बोलिये, जरा बुलन्द आवाज से। कई बार इस प्रकार की आवाज आई। ज्यों-ज्यो वक्ता जोर से बोलता गया, वे भी बोलते गये। वे बहुत आगे बढ़ गये। लगातार चिल्लाने लगे—कोई ताली बजाता, कोई हँसता और कोई बोलता। वक्ता के लिये बडी कठिनाई पैदा हो गई। ऐसे अवसर पर वक्ता को चाहिये था कि वह इन बाधकों का ध्यान ही न देता। बाधकों ने जोर से बोलने को कहा, वक्ता जोर से बोलने लगा। बस उन्होंने समझ लिया वक्ता कमजोर है। धीरे-धीरे बाधकों ने वक्ता पर कब्जा कर लिया।

एक बाधक ने मुझे ऐसे ही छेड़ना चाहा। एक बार कहा—बुलन्द आवाज़ से! दूसरी बार कहा—जरा ज़ोर से बोलिये। मैंने उसे समझ लिया। फिर धीरे से कहा—आपको शायद कम सुनाई देता है और नज़दीक आ जाइये। वह बोल उठा—नहीं मुझे कम नहीं सुनाई देता। मेरे कान ठीक हैं। जोरों की हँसी हुई उसकी दाल न गली।

कोई वक्ता जब देर तक बोलता है तो दो बातें हो सकती हैं। या तो लोग उठकर अपना रास्ता लेते हैं अथवा शोर गुल मचाकर वक्ता पर यह प्रभावित करना चाहते हैं कि हम लोग सुनना नहीं चाहते। और जब उठने में मजबूरी हो तब तो श्रोताओं के सामने कोई रास्ता ही नहीं रह जाता। कालेज के विद्यार्थी कभी-कभी बड़ी बुद्धि-मानी से बाधा डालते हैं। क्लास से निकलने की स्वतन्त्रता तो है नहीं।

कभी कोई बेढंगा प्रश्न पूछ देता है, कोई छुट्टी माँगता और कोई मेज के नीचे जूते रगड़ता है । अध्यापक को चाहिये कि जब तक पढ़ावे बहुत ही मनोयोग के साथ पढ़ावे ।

बहुतेरे अनुभवी वक्ताओं के लिये बाधक साधक सिद्ध होते हैं । मैंने देखा एक वक्ता बोल रहा था । बाधक ने एकाएक उठकर कुछ प्रश्न किया । वक्ता ने कहा—धन्यवाद ! फिर वह आगे बढ़ा, जैसे किसी ने कुछ पूछा ही न हो । उसने फिर कुछ पूछा । फिर उत्तर मिला—धन्यवाद ! बाधक मुँह की खा गया ।

बहुत से वक्ताओं को, जब तक कोई बाधक छेड़ता नहीं, अपना भाषण फीका लगता है । वे दो-चार छेडनेवालों को पछाड़कर बड़ी सफलता के साथ आगे बढ़ते हैं । कहते हैं कि जार्ज बर्नार्डशा जब बोलते थे तो कभी-कभी जान-बूझकर एकाध बात कहते थे कि कोई छेड़े । एक वार देर तक उन्हे किसी ने छेड़ा ही नहीं । उनकी गति ढीली पड़ रही थी । तब उन्होंने आरत होकर पूछा—क्या यहाँ कोई भी ऐसा आदमी नहीं जो मुझसे मतभेद रखता हो ! पीछे से आवाज— मिस्टर शा, बेशक आप वाहियात बक रहे हैं । शा को मानो खोया रास्ता मिल गया । वे पिल पडे और आगे खूब ठाट से बोले ।

कभी-कभी कोई वक्ता स्वयं प्रश्न करके बाधक तैयार करता है । वक्ता का उद्देश्य यह रहता है कि स्वयं एक कौतूहलजनक प्रश्न करे और उसका उत्तर भी दे । प्रश्न सुनते ही श्रोताओं में से हर एक उसका उत्तर ढूँढने की कोशिश करता है । चूँकि वक्ता ने प्रश्न किया है श्रोता को बोलकर उत्तर देने का अधिकार भी है । स्पष्ट है जो आदमी आप का भाषण बिगाड़ने आया है वह इस अवसर से यथेष्ट लाभ उठाता है । एक खद्दरधारी वक्ता ने खादी की हिमायत करते हुये पूछा— "क्या आपने कभी विचार किया है कि कपड़ा क्यों इतना महँगा है ?"

"खद्दरधारियों ने जब से कार-बार शुरू कर दिया है"—पीछे से आवाज आई। वक्ता महोदय व्यक्तिगत आक्षेप को सहन न कर सके। बात बढ़ी और बिगड़ गई।

बाधक कुछ भी कह जाय वक्ता को उस पर गुस्सा न होना चाहिये। गुस्सा किया कि उसका तर्क-शक्ति मारी गई। वह अनाप-शनाप कह बैठेगा। अवसर देखकर बाधक के कुकृत्यों का जैसा उत्तर चाहे दे, इस पर अधिक कुछ नहीं सिखाया जा सकता। इतना ज़रूर कहा जा सकता है उसे ऐसा उत्तर देने का प्रयत्न करना चाहिये जिससे उसके पक्ष का समर्थन हो और साथ ही बाधक की खिल्ली उड़ाई जाय।

एक सार्वजनिक सभा में वक्ता की किसी बाधक ने हँसी उडाई। वक्ता रुक गया और कहा—"अपने शब्द वापस लीजिये अथवा कृपा-कर सभा से बाहर निकल जाइये।" उसने एक न सुनी। वक्ता मच से कूद पड़ा और आस्तीन उपर करते हुये बढा उस बाधक की ओर। पाँच-सात आदमियों ने बीच-बचाव करना चाहा लेकिन वक्ता माननेवाला न था। "छोड़ दो इसे मैं ठीक किये देता हूँ"—वक्ता ने कहा। बाधक जान लेकर भागा। कभी-कभी यह कायदा ठीक भी होता है।

विश्वविद्यालय के एक छात्रालय के वार्डेन छोटे कद के थे और 'दुअन्नी' कहने पर चिढ़ते थे। छात्रालय के वार्षिकोत्सव में दूसरे छात्रालय के पाँच-सात विद्यार्थी आगये थे। जब दूसरे विद्यार्थी ताली बजावें तो ये 'दुअन्नी, दुअन्नी' चिल्लायें। उत्सव समाप्त होते होते वार्डेन साहब वहाँ से हट गये। कुछ लड़के उठे उन्होंने 'दुअन्नी' कहनेवालों की खूब खातिर की। इस अवसर के लिये यही दवा उपयुक्त थी।

यदि बाधक से आप पहले से परिचित हैं और जानते हैं कि वह किसी विशेष कारण से हर जगह आपके पीछे पड़ा रहता है तो श्रोताओं से साफ़-साफ कह दीजिये कि यह आदमी निजी कारणों से यों ही प्रश्न करके छेड़ता है और हमारा तथा आपका बहुमूल्य समय काटता है। खुलकर कहिये कि शिष्ट समाज मे समय की यह बर्बादी क्षम्य नहीं है। जिन भाइयों को कुछ पूछना है बाद में पूछ सकते हैं। सभापतिजी की आज्ञा लेकर आप बोल सकते हैं। इस समय मुझे बोलने का आदेश हुआ है, मेरी सुन लीजिये। श्रोता आपके कथन को सत्य मानेंगे। आपके प्रति सहानुभूति प्रकट करेंगे। बाधक की ओर आँख निकालकर देखेंगे और उसके पास बैठे हुये लोग उसका हाथ पकड़कर खींचेंगे।

बाधक को किसी वक्ता से चिढ हो सकती है सम्भव है। वह उसका कहना न माने। स्थिति पर विचार करके सभापति को चाहिये कि वह जनता से साधारण अपील करे कि वह सभा की कार्यवाही में रुकावट न डाले। सभापति का पद सम्माननीय है। लोग उसकी बात मानते हैं।

१९४७ मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की कोर्ट की बैठक मे वाइस चान्सलर के चुनाव का मसला पेश था। उस समय डा० अमरनाथ झा वाइस चान्सलर होने के नाते सभापति के आसन पर विराजमान थे। बहुतेरे विद्यार्थी चाहते थे कि डा० झा फिर से चुन लिये जायँ। उन्हे पूर्वाभास मिल चुका था कि कोई दूसरा व्यक्ति चुना जानेवाला है। विद्यार्थियों ने गैलरी से सामुहिक प्रदर्शन किया और नारा लगाया—हम लोग डा० झा को चाहते हैं। कोर्ट की कार्यवाही इस प्रदर्शन के बीच न हो सकती थी। उनसे बहुतेरा कहा गया, पर न माने। डा० झा को उठना पड़ा। उन्होंने कहा—मेरा विश्वास था

विद्यार्थी समुचित शिष्टाचार दिखायेंगे। हमारा कहना आप न मानें और आप हमारा आदर करने का दम भरे यह बड़ी विचित्र बात है। लड़के शान्त होनेवाले न थे। फिर डा० झा ने कहा—'मैं कोर्ट की कार्यवाही आध घटे के लिये स्थगित करता हूँ और जब कोर्ट की बैठक फिर होगी तो दर्शक न आयेंगे।' विद्यार्थी ठिकाने आ गये।

डा० झा का यह आर्डर रामबाण था। सारे हथियार चूक जायँ तब रामबाण चलाइये। पर याद रखिये हर आदमी रामबाण नहीं चला सकता। वक्ताओं को यह सुनकर दुःख होगा कि बाधकों की संख्या इन दिनों जोरों पर बढ रही है। जनता में ज्यों-ज्यों शिक्षा का प्रसार होगा, ज्यों-ज्यो राजनीतिक चेतना होगी और ज्यों-ज्यों अधिकाधिक अधिकार मिलते जायेंगे बाधक बढते जायेंगे। हमारा उद्देश्य है कि वक्ताओं की एक शक्ति-शाली सेना तैयार की जाय जो राजनीति और सामाजिक क्षेत्रों मे सफलता के साथ लड़ सके। किन्तु साथ ही साथ, बिना किसी प्रयास के बाधकों की सेना भी तैयार हो रही है। घबराने की कोई बात नहीं, जैसा पहले कह चुके हैं भावी वक्ता इन बाधकों को साधक बनाने का उद्योग करेंगे। बाधकों का सामना करते-करते वक्ता को जो अनुभव और अभ्यास होगा वह जीवन भर काम आयेगा। कुशल है कि अभी बाधकों की संख्या कम है। फ्रान्स में एक राजनीतिज्ञ ने अदालत से अपनी स्त्री को तलाक देने की आज्ञा इसलिये माँगी कि उसकी स्त्री ने सभा में उसके भाषण में बाधा डाली थी। वास्तव में स्त्रियों का सामना करना बड़ा टेढा काम है। उनके सामने तर्क कोई चीज नहीं। खुद खड़ी होकर मुकाबले में आ जायेंगी, नीचे लड़का रोता-चीखता रहेगा। यदि कुछ कहिये तो बिगड़ उठेंगी—एक नारी के साथ ऐसा व्यवहार? तुम्हे शर्म नहीं आती? क्या सभ्य नागरिक का यही आचरण है? आप से जवाब देते न बनेगा। यदि आप जवाब दें तो लोग कहेंगे औरत के मुँह लगता है। एक बात मार्के

की ओर है। कोई पुरुष किसी महिला वक्ता के भाषण में बाधा डालने का साहस नहीं करता।

महिलाओं द्वारा यदि सभा की कार्यवाही में रुकावट हो तो सबसे अच्छा उपाय है कि उनकी ओर ध्यान ही न दिया जाय। यदि उसे हया होगी तो एकाध बार असफल प्रयास करने के बाद चुप लगा जायेगी। यदि उसे हया नहीं है, आपका भाषण चौपट करने पर उतारू है तो वह खड़ी रहेगी, बोलती जायेगी, अपने बच्चे को भी जरा छेड़ देगी वह भी सप्तम स्वर में अलापेगा। बरबस आपको ध्यान देना ही पड़ेगा। बहुत दिन हुये तुलसीदासजी कह गये हैं—
"का न करहिं अबला प्रबल।"

आप उसके प्रश्न को लीजिये। उस प्रश्न को जनता के सामने रखिये। यदि और कोई प्रश्न करनेवाला हो तो उसका प्रश्न भी लीजिये। फिर कहिये ये सब प्रश्न हमारे सामने रखे गये हैं। मैं इन पर आ ही रहा था लेकिन अभी अमुक विषय पर प्रकाश डाल रहा था। अब आप लोग बतावे इस विषय को पूरा कर लूँ तब प्रश्नों को लूँ अथवा अभी ले लूँ। मैं आपके प्रश्न को लेने को तैयार हूँ पर सबको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। आप प्रतीक्षा करें या सारी सभा प्रतीक्षा करे। बोलिये क्या राय है आप लोगों की। सभा में कोई भी आदमी महिला के पक्ष का समर्थन न करेगा। पीछे आप भले ही महिला के प्रश्न को छोड़ भी दीजिये, कोई उसकी जाँच नहीं करेगा। सभव है दाल न गलती देखकर महिला बीच ही में उठकर चली जाय।

कहीं-कहीं बाधक आपस में ही बातचीत करने लगते हैं। इससे श्रोताओं का ध्यान बँट जाता है। वे धीरे-धीरे बोलेंगे फिर जोर से बोलेंगे। कभी न कभी वक्ता को दखल देना ही पड़ेगा। सारी सभा डावाँडोल हो जायगी। एक सभा में मैं भाषण दे रहा था। श्रोताओं में दो-तीन

लगे झगड़ने। मैंने रुककर कहा (और रुकता नहीं तो करता क्या, हमारी कोई सुन थोड़े रहा था) भाइयो, लड़ते क्यो हो ? बात क्या है ? वे दोनो प्राय: एक साथ बोले—आपसे मतलब ! मैं अपना सा मुँह लिये रह गया। मेरे इलाके में दो काश्तकार लड़ें और मुझसे कुछ मतलब ही नहीं।

बाधक वास्तव में हमारी भूलों के प्रतिबिम्ब हैं। अधिकतर वक्ता ही उन्हे मौका देता है। जब हम कभी हकलाने लगते हैं बहुतेरे श्रोताओं जिनको हमसे कम सहानुभूति है, सुना-सुनाकर चिढ़ाने की कोशिश करते हैं। एक वक्ता ने भाषण के दौरान मे कह दिया हाथी खरीदी गई। उसकी जान की आफत आ गई। कई आदमी लगे पूछने—कितने में हाथी खरीदी गई। हम श्रोताओं को ऐसा अवसर न दें। अपने भाव और भाषा को सुधारें।

अधिक खतरनाक किस्म के बाधक माइक्रोफोन से आकर बोलना चाहते हैं। भाषण के दौरान में अथवा भाषण समाप्त होने पर वे माइक्रोफोन के लिये बड़ी ज़िद करते हैं। विपक्षी को सभा में माइक्रोफोन देना अथवा मच पर आकर बोलने का अवसर देना अपनी तलवार दुश्मन के हाथ देने के बराबर खतरनाक है। माइक्रोफोन पा जाने पर वह बैठने का नाम न लेगा और भले ही आप का मित्र बनकर आवे आपके भाषण की ऐसी काट-छाँट करेगा कि आपका ठिकाना न लगेगा। अगर वह साधारण वक्ता भी है तो उसका रंग चोखा चढ़ेगा।

चुनाव संबंधी एक सभा में मैं भाषण दे रहा था। एक विपक्षी ने माइक्रोफोन पर बोलने के लिये बड़ा ऊधम मचाया। सभापतिजी उसे देने के लिये सहमत भी हो गये, लेकिन मेरे भाषण के बाद। वह खामोश बैठ गया। मैं दृढ़ था कि चाहे कुछ भी हो माइक्रोफोन उसे

न मिले। मैं आध घंटे तक बोलनेवाला था, पर उस दिन घंटे भर खूब बोला। लेकिन तब भी वह डटा रहा और बहुतेरे आदमी भी जमे रहे। इसके बाद मैंने अपने भाषण को स्वयं बिगाड़ा। कुछ इधर-उधर की बे सिर-पैर की बातें कहना शुरू किया। लोग खिसकने लगे, यह देखकर मुझे खुशी हुई। सभापतिजी ने मेरी गति ढीली देखकर लगभग पद्रह मिनट बाद बैठ जाने की आज्ञा दी। उधर विपक्षी बोलने को तैयार, सामने सैकड़ों आदमी। मैंने जान-बूझकर माइक्रोफोन पर ऐसा घूसा मारा कि वह अलग जा गिरा। खुद बैठ रहा। विपक्षी बोलने आया पर बिना माइक्रोफोन के बोला। सभा उखड़ गई। बचे-खुचे लोग भी उठ पड़े। बेचारा क्या बोलता और किसे सुनाता। उस दिन से मैंने अपने लाउड-स्पीकर वाले को सावधान कर दिया कि जब कोई विपक्षी माइक्रोफोन पर आवे तो कोई पुर्जा ढीला कर दे। यह मेरी आपबीती घटना है। खतरनाक बाधकों से बचना हो तो ये सारे हथकडे आप को प्रयोग मे लाने पडेंगे।

वक्ता के विरुद्ध आजकल प्रदर्शन भी बहुत होने लगा है। हमारे देश मे तो अभी कुशल है। यूरोप और अमेरिका में राजनीतिक वक्ताओं की बडी आफत है। अपने उत्थान के आदि काल में हिटलर जब एक सभा मे भाषण करने आया तो देखा कि हाल उसके विरोधियों से खचाखच भरा है और उसके समर्थक बाहर खडे हैं। फिर भी वह बोलने आया, लेकिन बाहरवाले साथियों को दरवाजों और खिड़कियों पर नियुक्त करके यह समझाकर आया कि अमुक सकेत करते ही सब लोग दरवाजे, खिड़कियों को तोडकर अन्दर आ जायँ और खुलकर मार-पीट करें। वही हुआ। सैकड़ों को चोट लगी, हिटलर भी घायल हुआ। ऐसे अवसर पर यही करना उचित था। कभी-कभी वक्ता के लिये स्वयं अपनी सभा भंग करने की नौबत आ जाती है। हाँ यह

काम साधारण आदमियो का नहीं है। वक्ता के पीछे सौ-पचास आदमी ऐसे हों जो अपनी जान हथेली पर रखकर लड़ने को तैयार हो।

अभी १६४८ में अमेरिका के प्रेसिडेंट के चुनाव के संबंध में हेनरी वालेस जोरों का दौरा कर रहे थे। कई जगह उनके ऊपर टमाटर और सड़े अंडे फेंके गये। मालूम नहीं सड़े अंडे फेकने का दस्तूर वहाँ कैसे चलन में आया। वैलेस माननेवाला न था। सड़े अडे स्वीकार किये, सभायें की और भाषण दिया, एक जगह नहीं बीसों जगह।

हमारे देश में अभी सड़े अंडे नहीं फेंके जाते। लोग जूते-चप्पल फेंककर काम निकाल लेते हैं। एक सभा में ऐसी ही गड़बड़ी हुई। बाहर पुलिस खड़ी थी। जो लोग एक पॉव में जूता या चप्पल पहनकर निकले उन्हें गिरफ्तार कर लिया। ऐसी सभाओं में जूते का जवाब जूते से दिया जा सकता है। लेकिन गत कुछ वर्षों से विरोधी पक्ष के स्वागत का एक वड़ा खतरनाक तरीका चालू है। काले झडे दिखाना और काले फूल बरसाना। लाल झंडी दिखाने से साँड़ बहुत भागता है। मालूम नहीं काली झंडियों में है क्या जिससे हमारे देश के नेता वेतहाशा भागते हैं।

अध्याय ९

वक्ता की भूलें

वक्ता क्या करे, इस पर बहुत कुछ कहा जा चुका। वक्ता क्या न करे, कुछ इस पर भी सुन लीजिए। स्पष्ट है वक्ता ने जब भाषण देना स्वीकार कर लिया तो उसके ऊपर भारी दायित्व आ जाता है। उसे यह दायित्व बुद्धिमानी से निभाना होगा।

हमारा अनुभव है कि बहुतेरे वक्ता छोटी-मोटी ऐसी भूलें किया करते हैं जिनसे उनका अच्छा भाषण भी खराब हो जाता है। इन भूलों को वे सुधार सकते हैं। कुछ भूलें जो वक्ताओं के लिये विशेष घातक हैं नीचे दी जाती हैं—

१. देर करके आना। सभा में जाते हैं लेकिन देर करके। अब तक हमारी समझ में नहीं आया इसमें क्या रहस्य है।

एक और बडे मजे की बात देखी है। जो वक्ता दूर से आनेवाला होता है, हवाई जहाज, ट्रेन अथवा बस मे आनेवाला होता है, वह तो समय से आ जाता है लेकिन जो वक्ता नजदीक से आनेवाला होता है वही देर करता है। वक्ता की प्रतीक्षा में हजारों आदमी सभास्थान पर उपस्थित रहते हैं, उनका समय बहुत बर्बाद होता है। साथ ही वक्ता के विषय मे श्रोताओं का विचार खराब हो जाता है। वे कहते हैं बडा ढीला आदमी है, समय का मूल्य नहीं जानता। वक्ता कितनी ही माफी माँगे वह श्रोता के हृदय से यह भाव निकाल नहीं सकता। उच्चकोटि के राजनीतिक नेताओं की बात छोड़ दीजिये,

जिन्हे कभी-कभी प्रति दिन कई सभाओं में भाषण करना होता है। उन्हे रास्ता चलते भी कई रुकावटों का सामना करना पड़ता है। पंडित जवाहरलाल नेहरू चुनाव संबंधी दौरा करते समय सभाओं में कभी-कभी पाँच-सात घंटे देर पहुँचते थे। शायद चोटी के नेताओं की देखा-देखी छुट भैये भी देर करने लगे हैं। और बातों में मुकाबला कर सकें या नहीं, सबसे पहला दोष जो देर करना है, वे अपना लेते हैं। हमारे देश में इसीलिये हिन्दुस्तानी टाइम शब्द प्रचलित है। श्रोता भी इसे जान गये हैं। चार बजे सभा बुलाई जाय तो लोग पाँच बजे आते हैं। संयोजकों को भी यदि पाँच बजे सभा करना अभीष्ट होता है तो वे चार बजे की ही घोषणा करते हैं। यह हमारे लिये 'शर्म' की बात है। हिन्दुस्तानी टाइम में अंतर्निहित हिन्दुस्तानियत से हमे बचना चाहिये।

२. सभा में श्रोताओं से क्षमा याचना मत कीजिये। यदि आप देर करके आये हों तो अच्छा है कि सभापति से अथवा संयोजक से क्षमा माँग लें। वे आपकी ओर से श्रोताओं के समक्ष दुःख प्रकट करके सभा की कार्यवाही प्रारंभ कर देंगे। बहुतेरे वक्ता यों भी बात-चीत में माफी माँगने चलते हैं। उठते ही कहेंगे--मैं आपकी सेवा में कुछ निवेदन करने के लिये उपस्थित हुआ हूँ। मैं कोई पढा-लिखा आदमी नहीं हूँ और न तो मेरा कोई अनुभव है। मुझसे बहुत-सी भूलें हो सकती हैं। आपकी इस विद्वन्मण्डली में भाषण देने की योग्यता नहीं रखता। जो भूलें हों उन्हें आप लोग कृपाकर क्षमा करेंगे। भाषण के बीच भी माफी माँगते हैं, कसमें खाते हैं और अंत में फिर कहते हैं मेरे भाषण में बहुत-सी गलतियाँ, बहुत-सी भूलें हुई आप कृपाकर क्षमा करेंगे। मैंने जो कुछ कहा है इसमें जो कुछ अच्छा जान पड़े आप उसे मानें बाकी को छोड़ दें। वास्तव में

इतना झुकने की कोई आवश्यकता नहीं। आप कुछ सदेश देने के लिये आये हैं, संदेश दीजिये और बैठ जाइये। आपको अपने सदेश मे पूरा विश्वास है। माफियाँ माँगने और कसमें खाने से आप अपने को अाकरण हल्का कर रहे हैं।

३. सदेहात्मक शब्दो को न कहिये। जिस कथन को वक्ता निश्चित रूप से सत्य जानता है उसके कहने में भी वक्ता कुछ न कुछ सदेह की मात्रा घुसा देता है। घड़ी आपके हाथ में है ३ बजकर २७ मिनट हुये हैं। फिर करीब-करीब साढ़े तीन कहने की क्या आवश्यकता है। सीधे साढ़े तीन कह देना अधिक प्रभावकारी होगा। अथवा कहिये हमारी घड़ी में ३ बजकर २७ मिनट हैं। करीब-करीब साढ़े तीन कहने से श्रोता को एक तो आपकी घड़ी पर इतमीनान न होगा दूसरे वह समझेगा ३ बजकर ४० मिनट और ३ बजकर २० मिनट के बीच कोई समय है।

एक साहब भाषण देते हुये कह रहे थे यदि आप देहात में जायें तो शायद किसान पूछेगा कि काग्रेस ने गल्ले की कमी को दूर करने के लिये क्या किया ? वह शायद यह भी पूछे कि काग्रेस ने महँगाई को दूर करने के लिये क्या किया ? शायद फिर पूछे कांग्रेस ने घूसखोरी से जनता को बचाने के लिये क्या किया ? ऐसी स्थिति में शायद आप उत्तर देंगे कि……। आदि। अगर वे 'शायद' निकालकर कहते—यदि आप देहात में जायें तो किसान पूछेगा कि कांग्रेस ने गल्ले की कमी को दूर करने के लिये क्या किया ? वह यह भी पूछेगा कि काग्रेस ने मॅहगाई को दूर करने के लिये क्या किया ? वह फिर पूछेगा कांग्रेस ने घूसखोरी से जनता को बचाने के लिए क्या किया ? ऐसी स्थिति में आप उत्तर देंगे कि……। इसी तरह 'संभव है' हो सकता है कि आदि शब्द समूह अनिश्चतता के द्योतक हैं। श्रोता कहेगा चलो जी इस वक्ता को

किसी बात का निश्चय नहीं । ऐसा गड़बड़झाला तो हमारे दिमाग मे भी बहुत भरा हुआ है ।

४. कुछ लोगों को आदत होती है किसी खास शब्द को अकारण बार-बार दुहराने की । 'तो' को बार-बार कहने की आदत प्रायः २५ प्रतिशत वक्ताओं को है । हर दूसरे-तीसरे वाक्य मे एक बार 'तो' डाल दिया । महात्मा गाधी भी अपने भाषणों मे 'तो' का अधिक प्रयोग करते थे । ऐसे तकिया कलाम रखनेवालों को बाधक और भी परेशान करते हैं । एक वक्ता महोदय इसी तरह 'तो' 'तो' करते जा रहे थे । एक बाधक ने उनका 'तो' सुनकर कहा 'जो' । फिर 'तो' कहा तो उसने कहा 'ऐन' । फिर कहा 'ग़ैन' । इस प्रकार जब 'इये' तक गया तो उठकर रास्ता लिया ।

हमें एक मास्टर साहब पढाया करते थे । उनका तकिया कलाम था 'है बात कि नहीं' । हर वाक्य के अन्त में कहते 'है बात कि नहीं' । सुनते-सुनते हमारे साथी गयाप्रसाद ने एक दिन कहा 'नहीं' । मास्टर बहुत बिगड़े, पर उनकी आदत न छूटी ।

हमारे एक वकील मित्र अदालत के सामने प्रायः हर वाक्य के प्रारभ में कह लेते हैं—'हुजूर, जी हुजूर ।' उनकी आदत यहाँ तक बिगड़ चुकी है कि मित्रों के साथ सभाषण करने में भी वे 'हुजूर' लगाना नहीं भूलते ।

बहुतेरे शब्द तकिया कलाम के रूप मे बाज़ार मे चले गये हैं । जैसे गोया, अगरचे, जो है सो आदि । तकिया कलाम वाले अपनी कमजोरी नहीं जानते । उनके मित्र और पड़ोसी जानते हैं ।

तकिया कलाम रखनेवाले अगर मच पर आकर कुछ कर दिखाना चाहते हैं तो वे कृपाकर अपना तकिया कलाम घर रखकर आवे । तकिया कलाम छोड़ने की एक साधारण विधि है । आप अपने किसी मित्र से पूछिये क्या आपका कोई तकिया कलाम है । मित्र

आप से कुछ समय बहुत बातचीत करके बता सकेगा। फिर आप अपनी मित्र-मंडली में घोषणा कर दीजिये कि मित्र आपको हर तकिया कलाम पर रोक दिया करें। हफ्ते दो हफ्ते में आपका रोग छूट जायेगा।

५. सभा के किसी एक व्यक्ति अथवा एक अंग का मजाक न उड़ाइये। किसी के प्रति यदि आपने कहा—आप खूब हैं! भगवान ने आपको भी बहुत सुन्दर बनाया है! तो यह बात सबको बुरी लगेगी। इस प्रकार किसी वर्ग विशेष के लिये ऐसी शब्दावली का प्रयोग वर्जित है।

६. श्रोता के सामने आने पर आप बहुत ज्यादा संकोच न दिखावें। बहुत से वक्ता अपना पूरा परिचय देने में भी संकोच करते हैं। यह ठीक नहीं। श्रोता अच्छी तरह जान लेना चाहता है कि वक्ता है कौन, उसकी योग्यता क्या है और उसका अनुभव क्या है। वक्ता को चाहिये कि अपना पूरा नाम, अपनी योग्यता और प्रस्तुत विषय को संपादन करने की क्षमता एक कागज पर लिखकर सभापति को दे दे। बात यह है कि सभापति भी बहुधा वक्ताओं के विषय में अधिक नहीं जानते और वे संकोच के मारे वक्ता का परिचय पूछते भी नहीं। जैसे-तैसे काम निकालना चाहते हैं। सभापतिजी ने यदि आपकी प्रशंसा आवश्यकता से अधिक कर दी तो कृपाकर आप उनके कथन को गलत न काटें। यदि वैसे ही कोई निराधार बात कह दी है तो भाषण के दौरान में लगे हाथ कह दीजिये। सभापति आपको विद्वान् और बुद्धिमान कहेगा। आप यह न कहें कि आप निरक्षर हैं और मूर्ख हैं। आप समझते होंगे आप शिष्टता का निर्वाहन कर रहे हैं, उधर श्रोता आपको सचमुच निरक्षर और मूर्ख समझ रहे हैं।

७. भाषण के बीच आप बनने की कोशिश न करें। आप बड़े

विद्वान हों, लेकिन खुलकर न कहिये कि आप अमुक क्लास पास हैं। आप बडे धनवान हों लेकिन खुलकर न कहिये कि आप के पास इतने लाख रुपये हैं। यदि ऐसा आभास देने की आवश्यकता ही पड़े तो घुमा-फिराकर कहिये। आप यदि एम० ए० तक पढ चुके हैं तो यह न कहिये कि एम० ए० तक पढ़ चुका हूँ, इसलिये हमको इस विषय का अधिकार है। नहीं। घुमा-फिराकर कहिये—हम लोग जब एम० ए० क्लास में पढ़ रहे थे तो हमारे प्रोफेसर ने ऐसा-ऐसा कहा। उस बात का पहले से प्रसंग लाइये। यदि आप व्यक्त करना चाहते हैं कि आपने उपनिषदों का अध्ययन किया है तो यह न कहिये कि मैंने उपनिषदों को आद्योपान्त पढ़ डाला है। उपनिषदों का कुछ अश अपने भाषण में उद्धृत कीजिये, श्रोता स्वय समझ जायेगा कि आपने उपनिषद पढ़े हैं। यदि आपके पास दो-चार मोटरें हैं तो कहिये—एक दिन हमारे सब मोटर ड्राइवरों ने हड़ताल कर दी। आपका उद्देश्य पूरा हो जायेगा।

८. भाषण देते समय स्कूल मास्टर की तरह बच्चों को सबोधित न कीजिये। सार्वजनिक सभा में आज-कल प्रौढ़ों से अधिक सख्या में बच्चे आने लगे हैं। बच्चों का भी प्रौढ़ो की तरह सम्मान कीजिये किन्तु साथ ही उनके मन लायक बाते भी कहिये। सभा में यदि महिलायें हों तो उनके आत्म-सम्मान का विशेष ध्यान रखिये। अपने भाषण मे-केवल पुरुषों के ही लाभ की बातें न कहिये, महिलाओं के लिये उपयोगी बातें भी रखिये।

९. आपके पहले यदि कुछ वक्ता बोल गये हों तो आप अपनी तुलना उनसे न करें। यदि कोई ऐसा वक्ता बोल चुका है जिसके भाव, भाषा और शैली से लोग बहुत प्रभावित हुए हैं और आप अच्छी तरह समझते हो कि आप उसकी बराबरी नहीं कर सकेंगे, फिर भी आप हार न मान जाइए और न श्रोता से यही कहिये कि आप अमुक-

अमुक वक्ता के सामने अति तुच्छ हैं। न तो आप उसकी शैली की नकल ही कीजिये। आप आत्म-विश्वास रखिये, स्वावलंबी बनिये और अपने मार्ग पर पूर्व निश्चित योजना के अनुसार चलिये। ठीक है श्रोता पहिले आये हुये वक्ता से बहुत प्रभावित हुये थे, आप के भाव, भाषा और शैली से उनका स्वाद कुछ बदल जायेगा।

१०. अक्सर मंच पर ऐसे वक्ता आते हैं जो अपना भाषण इस प्रकार प्रारंभ करते हैं:

बहुतेरे सुयोग्य वक्ताओं ने इस विषय के हर पहलू पर काफी प्रकाश डाला है। मेरे कहने के लिये अब कोई चीज रह नहीं जाती। मैं क्या कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता। फिर भी सभापतिजी की आज्ञा है कैसे टाल सकता हूँ। यों तो मैं बोलने को तैयार नहीं था फिर भी अब तो बोलना ही पड़ेगा। आदि। पाँच मिनट तक इस प्रकार आना-कानी और नाज-नखरा कर लेने के बाद वे भाषण प्रारंभ करते हैं और घंटे आध घंटे तक बोल जाते हैं। कुछ अपनी बात कहेंगे, कुछ दूसरों की सुनकर कहेंगे। जब दूसरों की बातें चुराकर रखेंगे तो ज़रा पेशबंदी कर लेंगे और कहेंगे—जैसा हमारे भाई रामस्वरूपजी ने कहा था या जैसा हमारे पूर्व वक्ता ने कहा अथवा जैसा किसी ने अभी कहा है। हो सकता है आप इस तरह कुछ समय काट ले जायँ, लेकिन जब आप दूसरों का हवाला देते हैं, श्रोता समझ जाता है आप दिवालिया हो चुके हैं। इस प्रकार अपने दिवालियापन का नगा नाच न दिखाइये। आपके पहले यदि बीसों आदमी बोल चुके हों तो भी आप को बोलने के लिये पर्याप्त सामग्री मिल सकती है। यदि नहीं मिलती तो आप घंटे आध घंटे बोल कहाँ से गये। सचमुच यदि कोई नई बात कहने की नहीं है तो कृपाकर न बोलिये आप श्रोता का बड़ा उपकार करेंगे।

अध्याय १०

वाद-विवाद

वाद-विवाद करना बहुत उपयोगी है। इसीलिये आज प्रायः हर स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालय मे किसी न किसी रूप मे वाग्वर्द्धिनी सभा है। शहरो मे बहुतेरे क्लब हैं जहाँ वाद-विवाद हुआ करते हैं। और तो और जेलो मे कैदियों ने जहाँ-तहाँ वाग्वर्द्धिनी सभाये स्थापित कर रखी हैं।

बात यह है कि वाग्वर्द्धिनी सभाओं अथवा क्लबों मे जो वाद-विवाद हुआ करते हैं वे प्रायः वैसे ही है जैसे अदालत मे वकील करते हैं, व्यवस्थापिका सभा के व्यवस्थापक करते है अथवा सयुक्त राष्ट्र सगटन के प्रतिनिधि करते हैं। जो बालक वाद-विवाद करना सीखता है, तर्क करना जानता है और भरी सभा मे अपनी बात खुलकर कहने की क्षमता रखता है वह आगे चलकर अखिल भारतीय सम्मेलन अथवा अतर्राष्ट्रीय सम्मेलन मे दहाड़ सकता है। श्रोता बदल जायँ, अवसर बदल जाय, वाद-विवाद का विषय बदल जाय, पर विषय के प्रतिपादन करने का ढग तो वही है। यों साधारण सभाषण मे हम बहुत ढीले रहते हैं। तर्कपूर्ण सभाषण नहीं करते। बैठे ठाले कुछ न कुछ बका करते हैं। लेकिन वाग्वर्द्धिनी सभा में जिसने बोलने का अभ्यास किया वह तर्क करना जान जायेगा और अपनी बातों को व्यवस्थित रूप दे सकेगा। इससे भावी जीवन में उसे बड़ी सहायता मिलेगी। वह ढीली-ढाली बात न करेगा और न तो ढीले तर्क करेगा।

वाग्वर्द्धिनी सभाओं में बोलने का अभिप्राय यह नहीं है कि

जैसे-तैसे विपक्षी को हराया जाय, बल्कि यह है कि विषय की गहराई तक खोज की जाय और असलियत तक पहुँचा जा सके।

जब आप ताश खेलते हों, ताश का पत्ता चुराकर खेल जीत सकते हैं। हाकी या फुटबाल में दो चार खिलाडियों के हाथ-पैर तोड़कर जीत लेना आसान है, शतरज मे घोड़े को गलत तरीके पर कुदाकर विपक्षी को मात दे सकते हैं। जो सच्चे खिलाड़ी हैं, ऐसा कभी नही करते। हारे या जीतें सही चाल चलेगे। खेल खेल के लिये है, जीत के लिये नहीं। सच्चे खेल का आनन्द खेलने मे है, जीतने में नहीं। हाँ सच्चा खेल खेलें और जीत भी जायँ तो क्या कहना? यही उद्देश्य वाग्वर्द्धिनी सभा का है।

वाद-विवाद मे भाग लेने से वक्ता के भाव और भाषा में पर्याप्त सयम आ जाता है। कठिनाइयो का सामना करने की शक्ति बढती है। यदि हम शान्ति से बैठें तो किसी समस्या पर विचार करके सच्चाई तक पहुँच पाते हैं। पर इतना समय तो हर, जगह मिलता नहीं। हाँ, हम अपनी विचार-शक्ति पर बार-बार अधिक जोर देकर उसे बढ़ा सकते हैं और उसमे इतनी स्फूर्ति ला सकते हैं कि स्वसंचालित विमान भेदी तोप की तरह निशाने को मार सके। गोली को गोली से काटना थोडे अभ्यास की बात है। बोली को बोली से काटने के लिये और भी अधिक अभ्यास करना होगा। यह अभ्यास तभी हो सकता है जब आप किसी वाग्वर्द्धिनी सभा की कार्यवाहियों में अनुराग-पूर्वक भाग ले।

जब हमने अग्रेजी पढना प्रारंभ किया तो आपस में अग्रेजी बोलने का अभ्यास करते थे। हममें से एक कहता—आई सर। दूसरा कहता—नो सर। तीसरा कहता—देन हू सर। चौथा कहता—

ग्रीन सर। हम चार लड़के जहाँ बैठ जाते आपस में बोलने लगते। रास्ता चलते बोला करते। सुननेवाले समझते लड़के अंग्रेजी बोलना खूब जानते हैं। हम लोग जानते थे कि हम लोग जो कुछ भी बोल रहे हैं निरर्थक है, पर दूसरों को प्रभावित तो ज़रूर कर देते थे। हम लोग न तो किसी विषय पर विचार करते थे और न तो भाषा की शुद्धता पर ज़ोर देते थे। केवल क्रम का ध्यान रखते थे। हममें से कोई यदि क्रम तोड़ देता तो उसकी हँसी उड़ाई जाती। स्पष्ट है वाद-विवाद के केवल एक अंग—क्रम का ध्यान रखना—मे इतना बल था कि वह जनता को प्रभावित करता था।

वाग्वर्द्धिनी सभाओं की कार्यवाही में भाग लेने से हमारी विचार-शक्ति बढ़ती है। जब कोई विषय आप को दिया जाय तो आप स्वयं उसके विविध अगों पर विचार करके कुछ संकेत तैयार कर सकते हैं जो विषय के संपादन में सहायक होंगे। उन संकेतों को आप व्यवस्थित करके श्रोता के समक्ष इस ढंग से रख सकते हैं कि उनका यथेष्ट प्रभाव हो। साथ ही यदि कोई आपके समक्ष अपना तर्क रखे तो आप उसकी सचाई की जाँच कर सकते हैं और देख सकते हैं कि बातें क्रम बद्ध हैं अथवा नहीं। इतना ही नहीं आप किसी लेख, किसी भी भाषण अथवा किसी भी पुस्तक मे संपादित विचारधारा के क्रम और कोटि के विषय में बिना विशेष प्रयास के सम्मति दे सकते हैं। आपका मस्तिष्क तर्करहित और अशुद्ध वक्तव्य को सहन न कर सकेगा।

वाद-विवाद में दो पक्ष बोलते हैं और झगड़े में भी दो पक्ष बोलते हैं। दोनों में बातों की काट-छाँट है, किन्तु दोनों में भेद है। जैसा पहले कहा जा चुका है वाद-विवाद में विपक्षी पर विजय पाना लक्ष्य नहीं है। सही निष्कर्ष तक पहुँचना लक्ष्य है। किन्तु झगड़े का लक्ष्य है केवल विजय पाना। इसीलिये झगड़े में विपक्षी को हम पूरी

बात कहने का अवसर नहीं देना चाहते। उसकी बातों को काटकर बोलते हैं। तर्क वहाँ कोई चीज ही नहीं जो कुछ जी मे आया कहना है। कोशिश इस बात की की जाती है कि खुद समय ले विपक्षी को समय न मिल पावे। जोर-जार से बोलकर उसे ढक देना चाहते हैं। एक ही बात को बार-बार दुहराते हैं। जब बात से हारने लगते हैं तो कठोर शब्द निकालते हैं। कठोर शब्दों से काम नही चलता तो गाली देते हैं। गाली से भी यदि विपक्षी चुप नही हुआ तो मार बैठते हैं। जिस समय आपने वाद-विवाद का लक्ष्य विपक्षी पर विजय पाना बनाया, आप झगडे पर उतारू हो गये। आपके वाद-विवाद मे और झगडे मे कोई भेद न रहा। ऐसा देखा गया है दो पक्ष मे बैठे हुये दो पडित शास्त्र की चर्चा करते-करते गालियाँ बकने लगते हैं और हाथापाई कर बैठते हैं। ताश के खिलाड़ी खेलते-खेलते एक दूसरे को मार बैठते हैं। हाकी, फुटबाल के खेल में कभी-कभी खिलाडी का हाथ-पैर तोड दिया जाता है। क्यों? इसलिये कि प्रतिद्वन्द्वी कभी-कभी निम्न स्तर पर उतर आते हैं। जीत को वे अपना लक्ष्य बना लेते हैं। जुए के खेल मे जीत ही लक्ष्य है। शायद ही कभी जुए का खेल बिना झगडे के समाप्त होता हो, पुलिसवाले गिरफ्तारी करके मजा किरकिरा कर दे, बात और है। कचहरियों मे वादी-प्रतिवादी का उद्देश्य तो विजय अवश्य है। किन्तु वकीलों का उद्देश्य है वादी, प्रतिवादी, गवाह और अदालत की सहायता से सच्चाई तक पहुँचना। यदि वकील भी कोरी जीत को अपना लक्ष्य बना ले तो कचहरियों मे रोज जूते चले। धारा सभाओं का उद्देश्य है वाद-विवाद के पश्चात् किसी जन-समूह के कल्याण का कोई मार्ग ढूँढ निकालना। जब तक सारे सदस्य पार्टी का विचार छोड़कर इस उद्देश्य की ओर उन्मुख रहते हैं, सारा काम ठीक से चलता है। जब कोई पक्ष हठधर्मी दिखाता है, अपनी बात पर अड़ जाता है तो वोट

से निर्णय होता है। धारा सभा के सदस्य अपने दायित्वपूर्ण स्तर से उतरकर निम्न स्तर पर आ जाते हैं। कटुता बढ़ती है और कभी-कभी मार-पीट भी हो जाती है।

मार्च १९४४ मे बंगाल लेजिस्लेटिव एसेंबली के सदस्य अधिवेशन के समय एसंबली भवन मे मार-पीट कर बैठे। विरोधी पक्ष की ओर से कटौती का एक प्रस्ताव था। उस पर स्पीकर वोट लेने जा रहे थे कि यह हंगामा मचा। बात यह थी कि विरोधी पक्ष के दो सदस्य सरकारी पक्ष के एक सदस्य के इर्द गिर्द बैठे थे। सरकारी पक्षवालों ने इस पर आपत्ति की। स्पीकर ने भी विविध दलों को अपने क्षेत्रों मे जाने को कहा लेकिन कौन सुनता है। सरकारी पक्ष के दो-चार सदस्य तैश में आकर विरोधी पक्ष के उन दो सदस्यो के पास गये जो उनके क्षेत्र मे बैठे हुए थे। उन्होंने उन्हें बरबस उठाना चाहा। बस क्या था, मार-पीट हो गई। सभा की कार्यवाही आध घटे के लिये स्थगित कर दी गई। एक सरकारी सदस्य को क्षमा याचना करनी पड़ी।

वाद-विवाद का विषय भरसक ऐसा चुनना चाहिये जिसमे उभय पक्ष मे बाते कही जा सके। जो बात स्वतः सिद्ध है और व्यापक रूप से व्यवहार्य है उसे वाद-विवाद का विषय बनाने से विशेष लाभ न होगा। मान लीजिये एक पक्ष ने विषय लिया—भोजन करना चाहिये। दूसरे ने लिया—भोजन न करना चाहिये। वाद-विवाद अच्छा न चलेगा। आप दार्शनिक हों तो भले ही उभय पक्ष मे बहुत सी बातें कह सकते हैं किन्तु उसकी उपयोगिता क्या होगी! हॉ, यदि एक पक्ष विषय ले—शाकाहारी बनना चाहिये। दूसरा इसका विरोध करे और कहे मासाहारी बनना चाहिये। तो उभय पक्ष में धर्म, अर्थ, समाज और राजनीति के आधार पर काफी मसाला मिल

सकता है और जिस परिणाम पर आप पहुँचेंगे वह समाज को ग्राह्य होगा।

अनमेल विषय का एक और उदाहरण लीजिये। जेसस बड़े हैं या गाधी। जेसस या गांधी के विषय में भले ही कुछ न मालूम हो लेकिन लम्बी बात हाँकनेवाले नाम पर ही लड बैठेंगे। ये बड़े वे छोटे। बड़ा छोटा करना उनके बाये हाथ का खेल है। इन दो महात्माओं के बडप्पन की तुलना करने के लिये हममे स्वय योग्यता नहीं है। दो पहाड़ों की ऊँचाई की तुलना करने के लिये उन दोनों के ऊपर जाना होगा। वास्तव मे इन दोनों के देश, काल और समाज में बड़ा अन्तर है। दोनों में कोई तुलना ही नहीं है। फिर क्यों लड़ें?

हाँ, विषय हो सकता है—भारत ब्रिटिश राष्ट्र-मडल में रहे अथवा नहीं। उभय पक्ष मे बहुत कुछ कहा जा सकता है। इस विषय से हमको मतलब है, इस पर बोलने का हमारा अधिकार है और वाद-विवाद के बाद हम जिस परिणाम पर पहुँचेंगे, उससे हमारे जीवन का सबन्ध है।

विषय सीमित होना चाहिये। कल्पना कीजिये वाद-विवाद का विषय है किसानों के प्रति सरकार अन्याय कर रही है। विरोधी पक्ष कहता है—किसानों के प्रति सरकार न्याय कर रही है। विषय बड़ा व्यापक है। किसानों की सख्या अनगिनत है। हमारे देश में हैं, एशिया मे हैं, यूरोप में हैं, अमेरिका में हैं, आस्ट्रेलिया मे हैं—कहाँ नहीं हैं। और सरकारे हजारों हैं। हमारे ही देश मे हैं केन्द्रीय सरकार, प्रान्तीय सरकारें, रियासती सरकारें, फ्रेन्च सरकार, डच सरकार आदि। स्पष्ट है अलग अलग किसानों की अलग-अलग समस्याये हैं। अलग-अलग सरकार के अलग-अलग कानून हैं। युक्त प्रान्त का

किसान एक बोतल मिट्टी के तेल के लिये रोता है, संयुक्त राष्ट्र के किसान के घर मे बिजली लगी है। हमें अपना ध्यान किसी एक सरकार और उस सरकार के अधीन किसानों तक सीमित रहना चाहिये। हम यू० पी० सरकार और उसके किसानों को लें। भारत सरकार और भारतीय किसानो तक जा सकते हैं। विश्व भर के किसानों और वहाँ की सरकारों के पचड़े में पड़ने से क्या लाभ ? वाग्वर्द्धिनी सभा में जो वक्ता सबसे पहले आवे वह विषय को जिस पहलू से पकडे वही मान्य होना चाहिये। यदि बाद में आनेवाले वक्ता इधर-उधर जाना चाहे तो उन्हे इस आशय का आभास प्रारभ मे ही दे देना चाहिये।

प्रतियोगिता का विषय मालूम हो जाने के बाद आप किस पक्ष मे रहेंगे इसे स्वय निश्चित करें तो अच्छा है। बहुत से विषय ऐसे हैं जिन पर हमारा निजी एक मत है। कुछ विषयों के प्रति हम उदासीन हैं। कोई जरूरी नहीं कि आप विषय का वही पक्ष लें जो आपके निजी मत से मिलता हो। आप कोई भी पक्ष ले सकते हैं। हाँ, जिस पक्ष में आपकी मानसिक आस्था है उसका प्रतिपादन आपके लिये अपेक्षाकृत सरल होगा। अपनी आस्था के विरुद्ध बोलने में कुछ कठिनाई है लेकिन अधिक बहादुरी इसी मे है।

विषय पर आप स्वयं विचार करें। यदि प्रारभ में जो पक्ष आपने लिया है उस पर बोलने के लिये आपको कुछ भी न मिल रहा हो तो भी घन्टों सोचने के बाद आपको बहुत सी उपयोगी सामग्री मिल जायेगी। कागज़ पेंसिल लेकर बैठिये। अपने विषय का नाम ऊपर लिख लीजिये। अपने पक्ष की बातों को संकेत रूप में लिखना प्रारभ कीजिये। फिर विपक्ष की बातों को सकेत रूप मे लिखिये। कागज पर ऊपर-नीचे एक रेखा खींच लीजिये। बाईं ओर अपने पक्ष के संकेत

लिखिये, दाहिनी ओर विपक्ष के। फिर विपक्ष के एक-एक संकेत को लेकर उसकी काट ढूँढिये। अपनी योग्यता से आपने प्रतिपाद्य विषय की रूपरेखा तैयार कर ली।

इसके बाद आप अपनी मित्र मडली में बैठिये। चार-पाँच आदमी हों। अपना विषय रखिये। उसपर संक्षेप में अपना मत प्रकट कीजिये—भाषण के ढंग पर नहीं, साधारण सभाषण के तौर पर। एक-एक बात पर मित्रों की सम्मति लेते जाइये। काट-छाँट करते जाइये। अपने कागज पर यथास्थान संशोधन या परिवर्द्धन करते जाइये। भले ही मित्रमडली का कोई सदस्य प्रतियोगिता में आपके विपक्ष में खड़ा होनेवाला हो, कोई संकेत छिपाइये नहीं। मित्रमडली में सभाषण के उपरांत आप का ज्ञान और बढ जायेगा, साथ ही आप अपनी गहराई भी नाप सकेंगे। इसे एक प्रकार का पूर्वाभ्यास समझिये।

आपको कितने समय तक बोलना है, इसका ज्ञान पहले से कर लीजिये। फिर अपने संकेतों में से यदि समय की कमी हो तो दो-चार को छाँट दीजिये।

इसके बाद अपने विषय को लेकर आप अपने से बड़ों के पास जाइये। अपने संकेत उनके सामने रखिये और उनकी सम्मति माँगिये। वे कुछ न कुछ सुधार का सुझाव अवश्य देंगे। उनसे तर्क करने की आवश्यकता नहीं। उनकी बातें सुन लीजिये, उनके संकेत नोट कर लीजिये, अकेले में तर्क करते रहियेगा। आपके बहुत से संकेत ऐसे होंगे जिनकी पुष्टि की आवश्यकता है। कोई बात आपने छ महीने पहले पढ़ी, उसके आधार पर आपने संकेत बनाया है। कृपाकर उस पुस्तक से उस संकेत की पुष्टि कर लें। पुस्तकालय में

घंटे दो घंटे समय यदि आप लगावें तो बहुत-सी पुस्तकें और पत्रिकायें ऐसी मिलेंगी जो आपके विषय पर पर्याप्त प्रकाश डालती होंगी। उन्हें पढ़िये। उनसे लाभ उठाइये।

अपने भाषण में आप कतिपय मान्य अधिकारियों के वक्तव्य उद्धृत कर सकें तो अच्छा है। ऐसा लगेगा मानो आप अपनी गवाही में कई बड़े आदमियों को भी पेश कर रहे हैं। अपने कथन की पुष्टि में आप कुछ विषय से संबद्ध आँकडे भी दीजिये। उनका प्रभाव बहुत पड़ता है। लेकिन हर बात पर लाखों-करोड़ों का ब्योरा देते चलना भी गलती है। जहाँ-तहाँ दो-चार आँकडे दे देना अच्छा है। आँकड़ों को लिखकर ले जाना अच्छा है। अंकों मे लिखने से भ्रम हो सकता है। बड़ी सख्याओं को शब्दों मे लिखकर ले जाइये। जैसे 'बंगाल के अकाल मे पैंतीस लाख आदमी मर गये'। ३५००००० लिखने से जल्दी मे आदमी ३५०००० (तीन लाख पचास हजार) या ३५०००००० (तीन करोड़ पचास लाख गये) पढ सकता है। इससे घोर-अनर्थ होगा।

भाषण में प्रतिपाद्य विषय का एक ही पक्ष जानना आवश्यक है किन्तु वाद-विवाद में विषय के दोनों पक्षों का जानना आवश्यक है। न केवल आपको अपने पक्ष का समर्थन करना है वरन् विरोधी पक्ष के तर्कों को काटना भी है। विरोधी पक्ष के तर्कों की जानकारी रखना वास्तव मे अपने पक्ष के तर्कों के जानने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। बहुतेरे सुयोग्य वक्ता प्रतिद्वन्द्वी के पक्ष को इतना अधिक तैयार करते हैं जितना स्वयं प्रतिद्वन्द्वी नहीं तैयार करता। प्रतिद्वन्द्वी बोल चुका है तो उसके तर्कों को काटेंगे ही, यदि प्रतिद्वन्द्वी के पहले स्वयं बोलने उठे तो उसके पक्ष की बातों को स्वयं उपस्थित करके उनका पूरा भड़ाफोड़ कर दें।

वाद विवाद के लिये कोई भी विषय दिया जाय उसके उभय पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। कुछ बातों का खंडन करना सरल है, किन्तु कुछ बातों का खडन करना अपेक्षाकृत कठिन है। ऐसे अवसर पर कोई जरूरी नहीं कि प्रतिद्वन्द्वी ने जो कुछ भी कहा उसका खडन किया ही जाय। जिस बात का खडन करना कठिन हो उसे वैसे ही छोड़ दीजिये, आपके लिये मैदान खाली पड़ा है, दूसरी बाते लीजिये। कल्पना कीजिये वाद-विवाद का विषय है—नागरिक जीवन ग्रामीण जीवन से अच्छा है। आप ग्रामीण जीवन के पक्ष में हैं। नागरिक जीवन के समर्थक ने कहा—'ग्रामीण जनता गरीब है।' बात सही है। इसका आप विरोध नहीं कर सकते। यदि आप दरिद्र नारायण की प्रशंसा करने लगे अथवा ग्रामीण जनता को नागरिकों की अपेक्षा धनी प्रमाणित करने चले तो आप सफल न होंगे। आपके हित मे अच्छा होगा कि धनी गरीब के चक्कर मे न पड़े। ग्रामीण जीवन की अन्य विशेषताओं को लीजिये। विपक्षी के किसी तगडे तर्क का स्मरण दिलाना और सफलतापूर्वक उसका खडन न कर सकना हार मानना है।

बहुत सी ऐसी मौलिक बाते हैं जिन्हे सब लोग सही मानते हैं। ऐसी मोटी बातो का प्रमाण मत दीजिये। इसे कोई सुनना न चाहेगा। केवल आपका समय बर्बाद होगा। 'जाडे के मौसम मे दिन छोटा होता है, रात बड़ी होती है', भाषण के दौरान मे आपने ऐसा कहा। आप के कथन से सब लोग सहमत हैं। इसका प्रमाण देने का प्रयास करना भूल होगी।

अपने पक्ष में यथासम्भव कोई ऐसा तर्क न रखा जाय जिसका खण्डन करना विपक्षी के लिये बाये हाथ का खेल हो। ऐसी कोई गलत या निराधार बात न रखी जाय जिसे विपक्षी ले उडे और

जिसको वह आक्रमण की आधार शिला बना ले। सनातन धर्म के प्रबल समर्थक स्वामी अखिलानन्द किसी आर्यसमाज के पडित से गोरखपुर में एक बार धार्मिक विषय पर शास्त्रार्थ कर रहे थे। आर्य-समाज के पडित ने अपने तर्क से उनको घेर लिया था। जोश मे बोलते बोलते उनके मुँह से निकल पड़ा 'एक मिनट के लिये मान लें कि ईश्वर नहीं है ...'। अभी वे आगे कुछ कहना ही चाहते थे कि स्वामीजी ने उनको ललकारा—बस आप ईश्वर को नही मानते हैं न ? यदि नही मानते हैं तो हमलोगों की सारी बहस बेकार गई। मै ईश्वर को मानता हूँ। आप नहीं मानते हैं। क्या यह सच है।...'। आर्य-समाज का पडित जनता की सहानुभूति खो बैठा। कुश्ती का जोड बदल गया। बहस 'ईश्वरवाद और अनीश्वरवाद' पर होने लगी। बरबस आर्य समाजी पडित को अनीश्वरवाद का समर्थन करना पड़ा। थोड़ी देर मे वह पछाड़ खा गया, लोगों ने तालियाँ पीट दी। वास्तव में अनीश्वरवाद का समर्थक स्वय ईश्वर को मानता था। तर्क-वितर्क के दौरान मे अनायास कह बैठा—'एक मिनट के लिये मान ले कि ईश्वर नहीं है'। इस वाक्यांश से प्रतिपाद्य विषय पर कोई विशेष प्रकाश भी नही पड़ रहा था। बस मुँह से निकल पड़ा, जो उसके लिये घातक सिद्ध हुआ।

यों ऐसे शास्त्रार्थ मे जहाँ विषयान्तर करने का अवसर मिल सके, आवश्यकतानुसार विषयान्तर कर लेना बुद्धिमानी की बात है। अपनी डाल को कमजोर देखकर आप दूसरी डाल पकड़ सकते हैं। विपक्षी जहाँ कहीं ढीली-ढाली बात कहे अथवा विषय से थोड़ा-सा हटे आप और ढीले बन जाइये और विषय से ज्यादा हट जाइये। विपक्षी आप को विषय की निर्धारित सीमा में बाँधना चाहेगा, लेकिन फिर भी यदि आप निकलना ही चाहते हैं तो, निकल सकते हैं वह रोक न सकेगा। जब हम मित्र-मंडली में संभाषण करते हैं तो कहाँ की बात शुरू करते हैं

और कहाँ ले जाकर समाप्त करते हैं, यह आपने देखा होगा। कुछ ऐसी ही गुंजाइश शास्त्रार्थ में है।

वाद-विवाद के लिये जिस समय कोई विषय निर्धारित हो तो भरसक ऐसे विषय का वह अंग लीजिये जिसमें आपकी निजी आस्था हो। यदि बरबस आपकी आस्था के विरुद्ध आपको बोलना ही पड़ा तो उसमें आप को आस्था बनानी पड़ेगी—कम से कम विषय घोषणा होने के समय से लेकर वाद-विवाद समाप्त हो जाने तक। किसी विषय में सच्ची आस्था रख कर जब हम बोलते हैं तो हमारे तर्कों में अधिक जोर रहता है। आप भले ईश्वर को मानते हों, यदि अनीश्वरवाद का समर्थन करना पड़े तो दरअसल अनीश्वरवादी बन जाइये। ईश्वर से भी डरना छोड़ दीजिये। देखिये आपके तर्क सजीव हो उठेंगे।

प्रतिपाद्य विषय को तैयार कर लेने के बाद आप अपने नोट क्रमबद्ध कर लीजिये। मंच पर आने पर भी क्रमबद्ध बोलिये। यों तो कई वाग्वर्द्धिनी सभाओं में नोट देख-देखकर बोलने की आज्ञा है, लेकिन जहाँ नहीं है वहाँ संकेतों को याद करके जाना होगा। ८, १० मिनट के भाषण के लिये ८, १० संकेत पर्याप्त हैं। इतने संकेतों को याद करना ही होगा। दो-तीन संकेतों का संग्रह विपक्षियों के भाषण से कीजिये। इतना कर लेने पर आप केवल क्रम का ध्यान रखिये, भाषण में स्वयं गति आ जायेगी। इतना न याद कर सकें तो कम से कम दो संकेत प्रारंभ के और दो संकेत अंत के तो अवश्य याद कर लीजिये। संकेत ही नहीं दो-चार वाक्य प्रारंभ के और इतने ही वाक्य अन्त के याद कर लीजिये। भाषण के बीच में अवसर के अनुरूप भरती के कुछ वाक्य भी रख सकते हैं, विशेषकर विपक्षी की बातों को काटने के लिए। यदि आप में धीरज और संयम दोनों हैं तो आश्चर्य नहीं कि आप सफल रहें।

जैसा पहले कह आये हैं वाद-विवाद में अपने तर्क रखना और दूसरों के तर्क को काटना है। कहाँ तक आप अपने तर्क रखेंगे और कहाँ से विपक्ष के तर्कों का उत्तर देंगे यह आपको स्वय निश्चय करना है। आप चाहे तो दोनों को सयत भाव के साथ चला सकते हैं। पहले अपने तर्कों को उपस्थित करना फिर विपक्षी के तर्कों का खडन करना सीधा मार्ग है। पहले विपक्षी के तर्कों का खडन करना फिर अपने तर्क उपस्थित करना कटकाकीर्ण मार्ग तो है पर ऐसा करके वक्ता सभा मे गति लाता है। श्रोता और सभापति के कान खडे हो जाते हैं। वे वक्ता के कारनामों को देखने-सुनने को तैयार हो जाते हैं। वक्ता के कथन में कुछ गर्मी आ जाती है, वह डंके की चोट आक्रमण करके दिखा देता है कि मैं इन तर्कों को बच्चे का खेल समझता हूँ।

खंडन करते समय भी इस बात का ध्यान रहे कि हम विपक्षी के तर्कों को क्रम से लें। विपक्षी ने जो क्रम रखा था, यदि वही क्रम आप भी रख सके तो अच्छा है।

विपक्षी के एक तर्क को उसी के दूसरे तर्क से काटना विशेष रूप से प्रभावकारी होता है। मान लीजिये वाद-विवाद का विषय है— पंचायत राज कानून जनता के लिये लाभदायी होगा। समर्थक ने निम्नलिखित तर्क दिये :—

१. जनता अपना शासन स्वयं चलायेगी।
२. देश मे राजनीतिक चेतना बढ़ेगी।
३. लोग अपने अधिकारों को समझेंगे और उन्हें अपनायेंगे।
४. शिक्षा का प्रसार होगा।
५. स्वास्थ्य सुधार होगा।
६. धन-धान्य की वृद्धि होगी।

७. मुकदमेबाजी बन्द होगी।
८. देश मे शान्ति स्थापित होगी।
९. लोगों का चाल-चलन सुधरेगा। आदि....

खंडन करते हुये आप कहे—'विपक्ष के वक्ता ने पचायत राज कानून का समर्थन करते हुये मोटे तौर से दो बातें प्रस्तुत की हैं। एक तो कहा पचायत राज कानून के लागू होने पर लोग अपने अधिकारों को समझेंगे और दूसरे देशमे शान्ति स्थापित होगी। अधिकारों के लिये ही तो हर जगह लड़ाई-झगड़े चल रहे हैं। मनुष्य मनुष्य को खाये जा रहा है। चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है। राजा रंक किसी को शान्ति नहीं है। और यहाँ एक साँस में कहा जाता है कि लोग अपने अधिकारों को समझेंगे। दूसरी साँस में कहा जाता है देश में शान्ति स्थापित होगी। कितनी असंभव कल्पना है! बन्दर को लाठी दे दीजिये वह सब का सर फोड़ता चलेगा। उसका हाथ खाली रखिये चुप-चाप बैठा रहेगा। हाथ में अधिकार मिलते ही लोग मदान्ध हो उठते हैं। दूसरे पर झपट पड़ते हैं। लड़ते हैं, झगड़ते हैं। एक से एक घृणितकाम करते हैं। क्या अधिकार देने लायक है? आप कहेंगे, नहीं।

इतना कहते-कहते विपक्षी के सारे तर्क उड़ जायेंगे। पंचायत राजकानून के अंतर्गत देश के उज्ज्वल भविष्य की जो रूपरेखा उसने खींची है, वह मिट जायेगी। फिर आप अपनी बातें रखिये। आपका प्रभाव अच्छा पड़ेगा। विपक्षी के तर्कों ने तो स्वय एक दूसरे को काट डाला। आपके तर्क ज्यों के त्यों हैं। जनता की स्मृति में बिलकुल ताजे हैं।

भाषण में आकर्षण लाने के लिये हम कह चुके हैं कि दो-एक

क़िस्से-कहानी अथवा हास्योत्पादक चुटकुले कहने चाहिये। वाद-विवाद मे समय कम रहता है। किस्से-कहानी कहने में थोड़ा मनोरंजन होगा किन्तु साथ ही आपको कुछ बातों को समयाभाव के कारण छोड़कर आगे बढ़ना पडेगा। अतएव वाद-विवाद मे केवल मनोरजन के लिये कोई क़िस्सा कहना वर्जित है। हाँ उससे आपके विषय के प्रतिपादन में विशेष जोर आ जाता हो तो बात दूसरी है। मनोरंजन तो आवश्यक है। अपनी भाषा और शैली द्वारा कुछ न कुछ मनोरजन की सामग्री अवश्य दीजिये।

समय के संकोच के कारण वाद-विवाद मे बार-बार क्षमा जाँचना, धन्यवाद देना अथवा अन्य प्रकार से शिष्टाचार का प्रदर्शन करना हानिकर है। शिष्टाचार निभाना ही हो तो दो-एक वाक्य मे निभा लीजिये।

वाद-विवाद मे यदि दस मिनट का समय दिया जाय तो अपनी बातों को नौ मिनट के अन्दर ही समाप्त करने की कोशिश कीजिये। अपने सारे भाषण को निर्धारित समय के अनुसार बाँट दीजिये। जैसे पहले ५ मिनट अपने तर्कों के लिये, दूसरे ३ मिनट विपक्षी के तर्कों के खंडन के लिये और शेष दो मिनट तर्कों को दुहराने और धन्यवाद देने के लिये। समय का विभाजन बहुत आवश्यक है। हमें स्मरण है हमारे साथ एक वक्ता वाद-विवाद प्रतियोगिता में बोलने आये। कुल दस मिनट का समय था। पहले आठ मिनट तो उन्होंने भूमिका बाँधने में ही समाप्त किए। इतने मे पहली घन्टी बजी। उन्होंने समझा यह तो बड़ा गड़बड़ हुआ। मैदान बहुत पार करना है और समय कम है। बस सत्यनारायण की कथा की तरह दो मिनट मे धारा प्रवाह जल्दी-जल्दी बहुत कुछ कह गये। यों तर्क उनके बहुत अच्छे थे। उन्होंने समय का ध्यान न रखा, इसलिये सारा काम बिगड़ गया। एक दूसरे

प्रतिद्वन्द्वी का हाल मालूम है। उसे दस मिनट समय दिया जाता तो सात मिनट तक ही बोलता। घन्टी का डर उसे न था। निदान वह जहाँ भी बोला सर्वप्रथम रहा।

वाद-विवाद में सभापति बहुधा घन्टी बजाते हैं। समय समाप्त होने से एक या दो मिनट पहले एक घन्टी बजती है, समय समाप्त होने पर दूसरी। सभापति घन्टियों का तात्पर्य प्रारभ में ही समझा देते हैं। बहुत से वक्ता पहली घन्टी बजते ही कुछ घबरा उठते हैं। परिणाम-स्वरूप शेष एक-दो मिनटों मे अनाप-शनाप वक-झक करके पहले ८, ९ मिनटो की कमाई भी खो बैठते हैं। घबराहट मे उनकी तर्क शक्ति जवाब दे देती है। दो-चार बार बोलने पर वक्ता घन्टी से अभ्यस्त हो जाता है। अन्तिम घन्टी बजते ही शान्त हो जाना अच्छा है। जो वाक्य चल रहा है, उसे पूरा कर लीजिये। कोई नया वाक्य या नया तर्क न उपस्थित कीजिए उसका प्रभाव उल्टा होगा।

सम्भाषण

एक मनुष्य दूसरे पर अपने विचारों का प्रकाश अधिकतर संभाषण द्वारा ही करता है। आदि काल से अब तक मनुष्य विचारों के आदान-प्रदान की विधियों में सुधार करता आया है। विचारको का कहना है कि मनुष्य आज से लाखों बरस पहले बोल नहीं पाता था। संकेतों द्वारा अपने विचारों का प्रकाश करता था, ठीक वैसे ही जैसे गूँगे सकेत किया करते हैं। उन्हे प्यास लगती है तो मुँह के सामने हाथ रखकर चुल्लू बनाकर दिखाते हैं, उन्हे भूख लगती है तो पेट की ओर इशारा करते हैं। एक गूँगे को मैं देखता हूँ। वह अपनी भावी पत्नी का बड़ा सजीव वर्णन देता है। अपने माथे पर अपनी अँगुली फेरकर सेन्दूर लगाने का इशारा करता है और हाथ ऊपर-नीचे, इधर-उधर दिखाकर उसके छोटे-बड़े तथा पतले-मोटे होने की बात

समझाता है। आँय-बॉय कुछ बोलता जाता है जो समझ में नहीं आता। आज भी एक गूँगा दूसरे के इशारे को सरलतापूर्वक समझ जाता है। कुछ इसी तरह हमारे पूर्वजों का काम चलता था। भाषा-शास्त्रियों का कहना है कि एक बार मनुष्य एकत्र हुये और उन्होंने विविध चीजों का कुछ नाम देना चाहा। इतने में एक कौवा बोला 'काव'। उसका नाम 'काव' रख दिया गया। एक गाय बोली 'गाव'। उसका नाम 'गाव' पड़ गया। एक बैल देखकर किसी के मुँह से अनायास निकल आया 'बइल्ला'। उसका नाम 'बइल्ला' रख दिया गया। मनुष्य का यह सम्मेलन बार-बार हुआ और इस तरह भाषा-कोष में वृद्धि हुई। यह विचार कहाँ तक ठीक है, इसकी समीक्षा करना यहाँ अभीष्ट नहीं। पर इतना अवश्य मानना पडेगा कि मनुष्य ने एक दूसरे से बात-चीत करने की विधियों में सुधार करने की हमेशा कोशिश की है। वह कल टेलीफोन के तार द्वारा बात करता था, आज बेतार के तार द्वारा बात-चीत करता है। अब सुनता हूँ दियासलाई की डिबिया के बराबर एक यंत्र बननेवाला है जिसकी सहायता से आप सात समुद्र पार बातें करते हैं। फिर भी मनुष्य आज आमने-सामने एक दूसरे से जितना संभाषण करता है उतना अन्य साधनों से नहीं करता। साधारण मनुष्य दिन भर में पचासों से बात-चीत करता है। अपने परिवार के हर सदस्य से पचासों बार बोलता है। बात-चीत किये विना उसका काम ही नहीं चलता।

हमारे लिये सम्भाषण इतना महत्वपूर्ण है। इसीलिये हमें सम्भाषण की विधियों में अधिक से अधिक सुधार करना चाहिये। हर आदमी इस कला को जीवन भर सीखता है और इसका अभ्यास करता है। जहाँ तक इस कला के सीखने और अभ्यास करने का प्रश्न है मनुष्य मात्र एक दूसरे का प्रतिद्वन्द्वी है।

पारस्परिक सम्भाषण से मस्तिष्क का विकास होता है। ज्यों-ज्यों हमारा कार्य-क्षेत्र बढ़ता जाता है, हमारे सम्भाषण के विषय बढ़ते जाते हैं। आदि काल के मनुष्य का ज्ञान संकुचित था और इसलिये उसके सामने बात-चीत करने के विषय कम थे। साथ ही साथ उसकी बातें सुननेवाले भी कम थे। किन्तु आज हममें से हर एक ज्ञान का एक सञ्चित कोष रखता है और हमें विविध प्रकार के लोगों से प्रतिदिन भेंट होती है। पढ़े-लिखे अथवा समाज में कुछ आगे बढ़े मनुष्य को अपेक्षाकृत अधिक मनुष्यों से संपर्क होता है। घरेलू आवश्यकताओं के लिये सैकड़ों बार घर में बोलते हैं, घर से बाहर निकलते ही ताँगे-वाले से बात करते हैं, दफ़्तर में जाकर बीसों से काम की बातें करते हैं, बाजार में बीसों से क्रय-विक्रय के सम्बन्ध में तर्क करते हैं। सुबह-शाम अपने मित्रों से मिलते हैं। उनसे काम की बातें भले ही न करें, उनसे ऐसी बातें तो अवश्य करते हैं जो हमें उनसे बाँधे रखती हैं।

वार्तालाप की बढ़ती हुई उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुये, हमें वार्तालाप के महत्व को कम न समझना चाहिये।

आपस में बात चीत करने का ढंग माता बचपन से ही सिखाने लगती है। ज्यों-ज्यों बच्चा बढ़ता जाता है उसका शब्द-कोष बढ़ता जाता है और उसके उच्चारण में शुद्धता आने लगती है। वह तुतलाता है या हकलाता है तो माँ सुधारने का प्रयत्न करती है। लेकिन थोड़ा-सा और बड़े हो जाने पर हम सीखने का बिलकुल प्रयास नहीं करते और यह समझ बैठते हैं कि बातचीत करना तो बातचीत करने से ही आता है। हम भूल से समझ बैठते हैं कि इसके लिये शिक्षा-दीक्षा की आवश्यकता नहीं है।

अब हम किसी ऐसे आदमी से बात-चीत करते हैं जो समाज में हमसे ऊँचा स्थान रखता है तो हमें पता चलता है कि हम कितनी गहराई में हैं। बात-चीत करते-करते हमारी जबान बन्द हो जाती है।

हमें कुछ कहना है, पर कह नहीं पाते। जिस काम के लिये आये हैं, वह याद तो आ रहा है, पर उसे प्रकट करने के लिये मुँह में शब्द नहीं आते। हमें अपनी बात कहने का अवसर मिलता है, फिर भी कुछ नहीं कह पाते। निदान वह आदमी (जिससे हम बात करने गये हैं) मुखाकृति बदलकर मानो उसके ऊपर भारी बोझ है, दोनो हाथ उठाता है। वह हमारे लिये सिगनल है। हम हाथ जोडते, दाँत दिखाते बाहर निकल आते हैं। कभी-कभी हम बोलते हैं और खूब बोलते हैं। इतना अधिक बोलते हैं कि सुननेवाला ऊब जाता है। वह चाहता है हम उसका कमरा छोड़कर बाहर निकल जायँ। हम किसी से कोई काम कराना चाहते हैं, उससे प्रार्थना करने जाते हैं, हमारा काम करना तो दूर रहा वह हमारी बात सुनकर नाराज हो जाता है। ऐसा क्यो? इसलिये कि हमें बातचीत करने का ढग नहीं आता, हमें अपनी गरज रखने का ढग नहीं मालूम।

कभी-कभी हम ऐसे आदमी के पास जाते हैं जिसके हृदय में हम अपने लियें कुछ स्थान बनाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि उसके दिल से हमारा दिल बाते करता और भविष्य में भी वह हमें याद रखता। किसी सज्जन के मानस-पटल पर आप अपनी छाया अंकित करना चाहते हैं पर क्या आपने कभी विचार किया है कि यह काम कितना कठिन है। मनुष्य की स्मरण-शक्ति बहुत छोटी है, वह बातों को भूलना चाहती है। यदि आप चाहते हों कि आपको थोडी देर की भेंट होने पर भी कोई याद रखे तो आप उसे अपनी बातचीत से प्रभावित कीजिये। आप उस पर अपनी गहरी छाप डालिये। आप जब बातचीत करके उठें तो मनुष्य स्वतः विचार करे कि हाँ इस आदमी में कुछ विशेषता है। बातचीत से भला लगता है। बड़े पते की बात कहता है। कुछ देर तक और बैठता तो अच्छा रहता।

कारोबार मे अपना बात मे ग्राहक को प्रभावित न कर सकना असफलता का द्योतक है। प्राय: सारा व्यापार बातचीत के जोर पर ही चल रहा है। हर एक व्यापारी का कारोबार मुट्ठी भर विक्रेताओं के हाथ मे है। भारत के दो-एक शहरों मे और यूरप तथा अमेरिका के प्राय. प्रत्येक बडे शहर मे ऐसी शिक्षण सस्थायें खुली हैं जहाँ दूकान के विक्रेताओं को ग्राहको से बातचीत करने का ढग पढाया जाता है। विक्रेता के लिये ग्राहक को अपनी चीजे दिखा देना अथवा उनकी सारी विशेषताये बता देना ही जरूरी नही है, उसके लिये जरूरी यह भी है वह एक तो ग्राहक के हृदय मे खरीदने की इच्छा उत्पन्न करे, दूसरे अपनी ही चीज खरीदने के लिये उत्प्रेरित करे।

जो व्यक्ति मित्र-मडली मे बाते करने मे झेंपता है वह मनहूस कहलाता है। लोग उसके साथ रहना पसंद नही करते। सामाजिक परिचर्या के प्रति उसकी धारणा कुछ विचित्र रहती है। मनुष्य सामाजिक जीव कहा गया है, समाज मे रहना चाहता है, समाज के साथ हँसना, बोलना चाहता है। जो ऐसा नहीं कर सकता वह समाज में रहने की अपेक्षित योग्यता नहीं रखता। उसे समाजगत संभाषण मे एक कड़ी जोड़ने की क्षमता नहीं। वह सबसे अलग रहकर डेढ चावल की खिचड़ी पकाना पसद करता है। वह अपना आत्म-विश्वास खो बैठता है, अपने को दूसरों से छोटा समझने लगता है, अतएव मनुष्य मात्र से कटकर रहना चाहता है।

जो व्यक्ति आत्म-विश्वास और सुन्दरता के साथ बोलना जानता है, उसके चारों ओर लोग मडराते रहते हैं। उसके रहते-रहते एक तो बात-चीत का लग्गा लगा रहता है दूसरे वार्तालाप निम्न कोटि का नहीं होने पाता। वह मित्र-मंडली के संभाषण का निर्देशक है। वह शिष्ट संभाषण का सचालक है। वह मित्र-मंडली के संभाषण को

इतना परिष्कृत कर देगा कि उससे मानव मस्तिष्क का विकास हो। उससे मैत्री करना सब चाहेगे। क्यों? इसलिये कि सब अपने मस्तिष्क का विकास चाहते हैं जो उसकी संगति में सहज है। उसके साथ में रहने से चित्त शान्त रहता है, कुछ समय के लिये मनहूसियत से छुटकारा हो जाता है। वास्तव में सभाषण की शिष्टता मनुष्य को सर्वोच्च समाज मे प्रतिष्ठित करा सकती है। जितना ही जिसका संभाषण शिष्ट तथा मधुर होगा वह उतना ही प्रिय होगा। भाषण की शिष्टता हमारी सांस्कृतिक और बौद्धिक उच्चता का परिचायक है।

कभी-कभी हम बौद्धिक एवं गंभीर विषयों पर बात-चीत करते हैं। ऐसी बातें सुनने और समझने के लिये मस्तिष्क पर अधिक ज़ोर देना पड़ता है और साथ ही तर्क भी करना पड़ता है। विषय की गंभीरता के अनुरूप श्रोता को गंभीरतापूर्वक सुनना होगा और प्रतिपाद्य विषय को मनन करना होगा। यदि वह ऐसा नहीं करता तो शिष्ट और गंभीर संभाषण सुनने का अधिकारी वह नहीं हो सकता। जो लोग अधिकारपूर्वक बौद्धिक विषयों पर प्रकाश डाल सकते हैं वे धन्य हैं, वे मनुष्य मात्र के कल्याण के निमित्त किसी विषय को तैयार करके सरल भाषा में उपस्थित कर रहे हैं।

अन्त में हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि सम्भाषण का महत्व व्यावसायिक, सामाजिक, बौद्धिक और मानसिक सम्बन्ध स्थापित करने में है। एक मस्तिष्क दूसरे से सम्भाषण के द्वारा ही तो सम्बन्ध स्थापित करता है। सम्भाषण से या तो मैत्री होती है अथवा अन-बन होती है। एक मस्तिष्क दूसरे का सम्भाषण के द्वारा ही कुछ ज्ञान दान करता है। मूर्ख का मस्तिष्क भी कुछ न कुछ देगा ही। बुद्धिमान का मस्तिष्क यदि किसी मूर्ख के मस्तिष्क के सम्पर्क में आवे तो उसका

कुछ नुकसान नहीं होता। हमें जब कोई बात दूसरों को समझानी होती है तो पहले हम उसे स्वयं अच्छी तरह समझ लेते हैं। फिर उसे भाँति-भाँति के उदाहरण देकर समझाते हैं। इससे हमारे मस्तिष्क का विकास होता है और उससे अधिक उसके मस्तिष्क का विकास होता है जो हमारी बातें सुनता है।

बात-चीत करने के विषय निस्सीम हैं तो भी हमारे सामने ऐसी कठिनाई क्यों आ जाया करती है कि हमारा मुँह बन्द हो जाता है? ऐसा इसलिये होता है कि हमारे पास ऐसे विषय नहीं हैं जिनमें सुनने-वाले को अनुराग हो। हमारा ज्ञान भडार काफी बड़ा होना चाहिये ताकि हम हर आदमी की रुचि के अनुरूप और हर अवसर के उपयुक्त बातें कर सकें। इतना ही नहीं कहने की शैली भी आकर्षक होनी चाहिये।

हम अपने दैनिक कार्य व्यवहार मे विविध प्रकार के मनुष्यों से मिलते हैं। उनके पेशे अलग-अलग हैं। समाज मे उनका स्थान अलग-अलग है। उनकी समस्याये अलग-अलग हैं, उनकी शिक्षा-दीक्षा अलग-अलग हैं। इन्हीं कारणों से उनकी रुचि भी अलग-अलग है।

हाँ, सामयिक बातों से प्रायः सबको अनुराग होता है। पत्र-पत्रिकाओं मे दिये गये विषय सबको भाते हैं, क्योंकि वे बतलाते हैं कि मनुष्य क्या-क्या करता है और समय क्या-क्या करा रहा है। मनुष्य सामयिक समस्याओ, राजनीतिक उथल-पुथल, सामाजिक गतिविधि, आर्थिक क्रान्ति, वैज्ञानिक खोज आदि के विषय मे कहना-सुनना चाहता है। किसी को किसी चीज से अधिक अनुराग है किसी को किसी से। स्पष्ट है सफलतापूर्वक बातचीत करने के लिये हमे उपयुक्त विषयों की यथार्थ जानकारी रखनी चाहिये। हमे सामयिक घटनाओं की पृष्ठिभूमि और भावी

घटना-चक्र पर उनका प्रभाव भी जानना चाहिये। इससे हम मानव मात्र की ज्ञान-पिपासा को शान्त कर सकते हैं, साथ ही मनुष्य का कौतूहल बढ़ा सकते हैं।

देश काल की बातों का यथाविधि ज्ञान प्राप्त करने के लिये हमे दुनिया मे आँख खोलकर चलना होगा। सार्वजनिक सभाओं मे जाना, वाग्वर्द्धिनी सभाओं मे भाग लेना तथा शिष्ट मित्र-मडली मे आना-जाना भी ज्ञान प्राप्त करने के साधन हैं। घर पर बैठे यदि आपको सामाजिक समस्याओं का ज्ञान प्राप्त करना है तो पत्र-पत्रिकाओं को अधिक सख्या में पढ़िये। यदि आपने उपर्युक्त साधनों से लाभ उठाया तो आप मित्र-मडली मे आकर्षक ढग से बोल सकते हैं। यदि नहीं तो चुपचाप सुनते रहिये। थोड़ा-थोड़ा करके आपके पास भी उपयोगी सामग्री का भडार एकत्र हो जायेगा।

मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह मधुर, कर्णप्रिय और अनुरागपूर्ण स्वर मे बोले। चेहरे पर थोड़ी सी मुस्कराहट के साथ जो शब्द निकलते हैं वे श्रोता का मन मोह लेते हैं। कोई सगीतज्ञ किसी पद को गा रहा है। उसके एक-एक शब्द पर श्रोता गद्गद हो जाता है। वही पद कोई अनाड़ी गावे तो उसे सुनने को जी नही चाहता। शब्द में कुछ विशेषता है किन्तु अधिक विशेषता है शब्द के उच्चारण की विधि में और उच्चारण करते समय की मुख-मुद्रा मे। किसी सिनेमा के पात्र के मुँह से कोई गाना सुनिये, फिर वही गाना रेकार्ड पर सुनिये। आपको बहुत अन्तर मिलेगा। ठीक वही गाना सड़क पर इक्केवाले गाते फिरते हैं, उसे भी सुनिये। शब्द वे ही हैं, किन्तु क्या उनका कोई प्रभाव आपके हृदय पर पड़ता है?

आप शब्दों को सावधानी से चुनें और सादे चलते किन्तु

भावपूर्ण शब्दों और मुहाविरो का प्रयोग करें। जहाँ साधारण शब्दावली से काम चल जाय, वहाॅ जटिल शब्दावली का प्रयोग अनुचित है। अपनी बातचीत से आपत्तिजनक शब्दो को छाॅटने के लिये सुगम उपाय यह है कि हम धीरे-धीरे और संयम के साथ बोलें। यदि कोई अरुचिकर शब्द मुँह से आनेवाला हो तो उसे वहीं रोक दें। पहले कुछ असुविधा होगी, बात-चीत का क्रम जहाॅ-तहाँ टूट जायेगा किन्तु धीरे-धीरे अभ्यास हो जाने पर सुविधापूर्वक आप शिष्ट संभाषण मे सहयोग दे सकेगे। कुछ लोगों का ढग इतना खराब हो जाता है कि वे हर दो-तीन वाक्य मे कोई फूहड़ शब्द अथवा कोई गन्दी गाली अनायास बकते चलते हैं। उन्हें इसका पता भी नहीं चलता। यह आदत छोड़नी चाहिये।

संभाषण मे कुशल वह व्यक्ति है जो न केवल स्वय अच्छी तरह बात-चीत कर सके बल्कि जो दूसरों को बोलने के लिये उत्प्रेरित कर सके। वह दूसरो के मुँह से शब्द निकालने की कला में प्रवीण हो। जब आप बच्चो से बाते करे तो जरूरी नहीं कि आप बच्चों की तरह व्यवहार करने लगे और स्वयं बच्चे बन जायॅ। आप अपने ही ढग पर बातें करे किन्तु बातें ऐसी हो जो बच्चों को पसन्द आवे।

हाजिरजवाब आदमियो के उत्तर से लोग जल्द प्रभावित होते हैं। कहा जाता है कि प० मोतीलाल नेहरू बीमार थे। उन्हे देखने के लिये एक भारी डाक्टर आया। डाक्टर ने पूछा—आपको क्या बीमारी है? पडितजी ने बरसों पहले से रोग का विस्तृत विवरण देना प्रारंभ किया। डाक्टर ने ऊबकर पूछा—आप को इस समय क्या शिकायत है? कहिये। पंडितजी ने कहा— इस समय मेरी शिकायत यही है कि डाक्टर मेरी बात नही सुनता। डाक्टर निरुत्तर रह गया। फिर उसने सारी बातें सुनीं।

रेलवे अफ़सर में कभी-कभी अच्छा प्रश्नोत्तर सुनने को मिलता है। तीसरे दर्जे में एक यात्री चढ़ रहा था। भीतर से एक यात्री ने कहा—इसमें जगह नहीं है, कहाँ आते हो? चढ़नेवाले ने कहा—जगह नहीं है तो उतर जाओ। मेरे लिये जगह है, मैं चढ़ रहा हूँ।

जो रोज़ चुप रहा करता है वह भी, कम से कम हमारे देश में, रेलवे यात्रा करते समय वक्ता हो जाता है। मैं एक डब्बे में सफ़र कर रहा था। उसी डब्बे का एक यात्री दूसरे से प्रश्न पर प्रश्न करने लगा। दूसरा कुछ खीझ-सा गया। पहले ने पूछा—आप कहाँ जा रहे हैं? दूसरे ने उत्तर दिया—'जहन्नुम में जा रहा हूँ, आप से मतलब?' 'मतलब यह कि मुझे भी वहीं चलना है, एक साथी ढूँढ़ रहा था, पहले ने कहा। दूसरे का गुस्सा ठंडा हो गया, फिर उसने दिल खोलकर बातें कीं।

किन्तु कभी-कभी बातें बड़ी बेतुकी हो जाती हैं। हमारे साथी मुंशी सहदेवलाल ने सुन रखा था कि इनक्वायरी आफिस में ट्रेन की बाबत हर बात पूछी जा सकती है। उन्होंने पूछा—अमुक ट्रेन कब आती है? बाबू ने उचित उत्तर दिया। फिर पूछा—कहाँ खड़ी होती है, कब तक खड़ी रहती है, कब खुलती है, कहाँ जाती है? आदि, कई प्रश्न किये। बाबू ने सबके उत्तर दिये। लेकिन मुन्शीजी को बकबक करने की आदत थी। पूछ बैठे—'उस पर कितने आदमी चढ़े होंगे'। बाबू का पारा गरम हो गया। बड़ी देर तक ड्यूटी के नाते अथवा शिष्टाचार के नाते ऊटपटाँग प्रश्नों का उत्तर देता गया, पर इस प्रश्न के बाद उसने बोलना ही बन्द कर दिया। व्यर्थ की बकवास में समय काटने का प्रयत्न करनेवाले जहाँ-तहाँ सरकारी या गैरसरकारी कर्मचारियों का समय बर्बाद किया करते हैं, यह बुरा है।

किसी के निजी और घरेलू मामलों पर प्रश्न करना शिष्टता के विरुद्ध समझा जाता है। किसी की अवस्था पूछना, किसी का वेतन पूछना, किसी के जूते-छाते का दाम पूछना, अकारण किसी की स्त्री अथवा उसके सम्बन्धियों के नाम पूछना बुरा है।

कभी-कभी आप दस-पाँच आदमियों के संग पड़ जाते हैं। आप देखते हैं कि उनमें से कुछ लोग बोल रहे हैं, कुछ सुन रहे हैं। किसी कोने में बैठे आप की समझ में नहीं आता आप क्या बात करें और किससे करें। बड़ी विचित्र परिस्थिति आ जाती है, कोई हँसता है, कोई बोलता है, कोई किलकारियाँ मारता है और आप खामोश बैठे हैं। आपके मन में आता होगा कि उठकर कहीं चले जायँ। ऐसे अवसर पर धीरज से काम लेना चाहिये। यदि सारे लोगों के बीच केवल एक आदमी बोल रहा है तब तो आप ध्यानपूर्वक उसकी सुनते जाइये, मानो आप सार्वजनिक सभा में बैठे हों। यदि लोग तीन-चार टुकड़ियों में बँटकर बातें कर रहे हों तो आपको चाहिये कि किसी न किसी टुकड़ी में सम्मिलित हो जायँ। अपनी जगह पर बैठे-बैठे कमरे की तस्वीर देखना अथवा जँगले की छड़ गिनना अच्छा नहीं। हो सकता है कि आपके बोलने लायक कोई विषय अथवा कोई अवसर न आवे, पर आप दूसरों की बातों को मनोयोगपूर्वक सुनिये तो सही। यदि आप इतना कर सकते हैं तो आप उनके संभाषण में सहयोग दे रहे हैं और अपने समय का सदुपयोग कर रहे हैं।

बौद्धिक विषयों पर बातचीत करने के लिये हमारा अध्ययन गहरा होना चाहिये। और हमें विद्वानों का साथ करना चाहिये। किस विषय में आपको कितनी प्रगति है, इस पर आपकी सफलता निर्भर है। पहले पुस्तकों से बातें कर लीजिये। यदि आप किसी पुस्तकालय में जायँ तो पुस्तकें स्वयं आपको निमन्त्रण देती

हैं कि आप उन्हें खोलें। मानों वे आपसे कहती हैं कि जिल्दों के बीच ज्ञान की संचित राशि है जो आपके लिये उपयोगी है। किसी विद्वान् से आप बातें करें। आपको पता चलेगा कि उसके भाव उच्च कोटि के हैं, उसकी भाषा सयत है और उसका हास्य शिष्ट है। किसी मूर्ख से बातें कीजिये। वह छोटी बात करेगा और भद्दा मजाक करेगा।

साधु-सन्तो की संगति में आध्यात्मिक चर्चा होती है। मनन चिंतन के आधार पर इन्होंने जो ज्ञानार्जन किया है वह लोक कल्याण के लिये ही तो है। साधु-सन्तों द्वारा अनुभूत तथा वेद वाक्यों द्वारा प्रमाणित चर्चा सुनने ही लायक होती है। हमारे यहाँ साधु-सन्तों के साथ किये गये वार्तालाप को 'सत्सग' कहा गया है। दूसरे प्रकार का सम्भाषण कुसंग हो अथवा न हो, साधु-सन्तों का सम्भाषण वास्तव में सत्संग है।

इन दिनों बातचीत का ढर्रा कुछ ऐसा बिगड़ गया है कि लोग अश्लील और भद्दे मजाक मे ज्यादा आनन्द लेने लगे हैं। सत्संग से उन्हे चिढ़ होती जा रही है। यह मानना होगा कि सिनेमा के प्रसार के साथ-साथ लोगों की रुचि खराब होती जा रही है। स्टेज के गाने की नकल, स्टेज के अभिनय की नकल और स्टेज की पोशाक की नकल होने लगी है। विद्यार्थी को इतिहास की पुस्तक मे वर्णित पात्रों का नाम याद हो या न हो, सिनेमा के पात्र का नाम याद रहेगा। अक्सर लोग सिनेमा के पात्रों का गुणगान करते मिलते हैं। उनके सुनने-वाले भी बहुत मिलते हैं। किसी साधु-सन्त की चर्चा की जाय तो लोग सरसरी तोर पर टाल देंगे। भगवन्नाम संकीर्तन से जो लोग मुँह फेर लेते हैं, फिल्मी गानों पर टूट पड़ते हैं। यह समय है कि हम बिगड़ती हुई रुचि से समाज की रक्षा करें।

भूत-प्रेतों की डरावनी बातें सुनाइये तो सब बड़े ध्यान से सुनेंगे। क्यों ? इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि ऐसी बात-चीत मे बहुत-सी कौतूहलपूर्ण घटनाओं का वर्णन होता है। दूसरे यह कि भय नामक मनोविकार प्रत्येक मनुष्य मे वर्तमान है। कोई इससे बचा नही है। किसी मे कम है, किसी मे अधिक। बहुतों के तो भूत-प्रेत का वर्णन करने मे रोंगटे खडे हो जाते हैं। चोर का नाम सुनकर कुछ लोग लिहाफ मे सर ढक लेते हैं, चोर देखकर वेहोश हो जाते हैं। कुछ ऐसे हैं जो मुहल्ले मे आये चोर को ललकारते हैं। भले ही भूत-प्रेत की बातों मे हम बहुतों को फँसा ले, लेकिन ऐसी बात-चीत से कुछ लाभ नहीं। हमें ऐसी बातों को प्रोत्साहन न देना चाहिये।

किस्से कहानियों और चुभते चुटकुलों से आप अपने मित्रों का काफी मनोरंजन कर सकते हैं, किन्तु केवल मनोरजन के लिये बात करना शिष्ट सम्भाषण नहीं है। इससे मस्तिष्क का विकास नहीं होता। मनोरजन हमारे सम्भाषण का आवश्यक अग है, वह सम्भाषण का विषय नहीं हो सकता। जो व्यक्ति अपनी मित्र-मन्डली को सम्भाषण के बीच बार-बार हँसाता है उसकी बड़ी पूछ रहती है। उसके बिना बैठक अच्छी नही जमती। मित्र-मन्डली को हँसाना एक कला है जो सब के पास नहीं है। कला को न जानते हुये जो लोग शर्माते-शर्माते मनोरंजक कहानी उपस्थित करते हैं, उनका ही उल्टे मजाक उड़ाया जाता है।

किससे बोले और कब बोलें, इस पर भी विचार कर लेना चाहिये। हमे बात-चीत करना खूब आता हो, बात-चीत की सामग्री भी हमारे पास प्रचुर मात्रा में हो किन्तु, हर जगह और हर समय हम बोल नहीं सकते। इसके पहले कि हम अपना मुँह खोलें हमे जान लेना चाहिये

कि हम किसके सामने बोल रहे हैं और जिनसे बात कर रहे हैं उन्हें किस विषय से अनुराग है। जिस विषय से हमें प्रेम है उसीसे यदि दूसरे को भी प्रेम है तब तो मैत्रीपूर्ण बात हो सकती है। यदि नहीं तो एक दूसरे के विभिन्न रुचियो को ध्यान में रखते हुये कोई ऐसा विषय उठाना चाहिये जिससे उभय पक्ष समान दूरी पर हों। घनिष्ठ मित्रों के बीच बात करते समय ऐसी कठिनाई उपस्थित नहीं होती। उनकी रुचि के विषय में हमे पूरी जानकारी रहा करती है।

प्रेमी-प्रेमिका घन्टो बातें करते रहते हैं। क्यों? इसलिये कि उन्हे एक दूसरे की रुचि का पता है। वे एक दूसरे के विषय में बातें करते हैं, अतएव एक ही बात दूसरे को प्यारी लगती है। उन्हे समय मिले तो हफ्तों बातें करते रहे और किसी का जी न ऊबे।

यह निश्चित हो जाने पर कि हमें बोलना ही है और हमें अमुक विषय पर बाते चलानी हैं अब यह देखना चाहिये कि रुचिकर सम्भाषण के सिद्धान्त क्या हैं? बात-चीत को रुचिकर बनाने के लिये उसमें निम्नलिखित विशेषताये आवश्यक हैं:

१. स्पष्टता—हमें किसी व्यक्ति तक अपना विचार पहुँचाना है। हमें उन विचारों को इस ढंग से उपस्थित करना चाहिये कि सुननेवाला ठीक-ठीक समझ जाय। बहुत से लोगों के पास बड़े उच्च कोटि के विचार हैं किन्तु वे उन्हे स्पष्टतया समझा नहीं पाते। जीवन के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में स्पष्टवादिता आवश्यक है। जैसा हमारा विचार है, ठीक वैसा ही श्रोता पर व्यक्त करें। सोचा कुछ और, कह गये कुछ और, इससे श्रोता का दिमाग़ और खराब होता है। कुछ लोगों का तो विचार करने का तरीका ही गलत है। वे गुमराह बने रहते हैं, वे संभाषण मे औरों को गुमराह बनायेंगे। बहुत से लोग स्पष्ट विचारों के होते हुये भी समुचित शब्दावली के अभाव में वाक्य को अधूरा ही छोड़

कर आगे बढ़ते हैं। वे आशा करते हैं कि श्रोता स्वयं पूरा कर लिया करेगा। कभी-कभी वे हाथ या मुँह से इशारा करके काम चला लेते हैं। यदि उन्हे कहना है—सारा दूध समाप्त हो गया तो वे कहेंगे —सारा दूध—, फिर दो बार चुटकी बजा देंगे—यह निरा आलस्य है। हम इस कमजोरी को दूर कर सकते हैं। हमे अपने विचारों का विश्लेषण करते रहना चाहिये। ऐसा करने से जो कुछ भी शिथिलता हमारे विचार में रहेगी, दूर हो जायेगी। अपनी भाषा को दुरुस्त करने के लिये हमे अपना अध्ययन बढाना होगा।

जो स्पष्ट बोलता है वह सुननेवालों की विचारधारा से सामंजस्य स्थापित करता है, अपने तर्कों द्वारा विश्वास पैदा करता है और सुननेवालों पर कभी बोझ नहीं मालूम होता।

२. सूक्ष्मता—जिसके विचार सही होंगे वह अपनी बातों को संक्षेप में रख सकेगा। जो बहुत बोलेगा उसकी बातों में बनावट होगी। थोड़े में अपनी बातों को व्यक्त कर देना वक्ता की सच्चाई का परिचायक है। एक ही बात को घुमा-फिराकर कई तरह से रखना, लंबी-लबी कहानियाँ कहना, सीधी-सी बात को समझाने के लिये प्रमाण देते रहना वक्ता की कमजोरी है। वह दूसरों को बोलने का अवसर देता है। बदले में लोग उसे भड़भड़िया की सजा देते हैं। उसकी बातों में विश्वास नहीं करते और कहते हैं—अगर बातें सच होतीं तो इतनी भूमिका बाँधने की क्या आवश्यकता थी।

६. सादगी—बातचीत में किसी प्रकार की बनावट लाना तुच्छता है। ज़बान को ऐंठ-ऐंठकर बोलना, मुँह बनाना, ढूँढ़-ढूँढ़कर भरती के शब्द भरना ढोंग है। कुछ लोग जान-बूझकर ऐसी शब्दावली का प्रयोग करते हैं, ऐसे प्रसंग छेड़ते हैं जो सुननेवालों

की समझ मे नही आते। उनकी धारणा है कि ऐसा करने से लोग हमे सुसस्कृत और सुपडित समझेगे। उनकी बाते सुनते-सुनते थोड़ी देर मे जी ऊब उठता है। यदि थोड़ा बोलने से, छोटे-छोटे शब्दों और वाक्यों से हम कोई विचार व्यक्त कर सके तो बात को बढ़ाने और विचारो को जटिल करने से लाभ ही क्या है?

४. मौलिकता—सभाषण मे मौलिकता लाने से संभाषण की रोचकता वढ जाती है। कुछ नई बाते लाइये तो मित्र-मडली तन्मय होकर आपकी बाते सुनेगी। पुरानी बात को दुहराइये तो कोई न कोई बात काटकर बोल देगा। नई कहानियाँ, नये चुटकुले एक के बाद दूसरे कहते जाइये, तब भी मित्र मडली का जी न ऊबेगा। लोग आप को मौका देंगे। घरेलू बातचीत मे ढूँढ़-ढूँढकर मौलिक बातों के रखने की आवश्यकता नही। वहाँ तो धर्म, साहित्य राजनीति या समाज की चर्चा करनी नही है। जहाँ केवल नोन, तेल, लकड़ी तक ही संभाषण सीमित है वहाँ मौलिकता ठूँस-ठूँसकर भरी नही जा सकती। चाय पीते समय चाय पर लगाई जानेवाली ड्यूटी के औचित्य पर भारतीय पार्लियामेंट मे होनेवाले भाषणों के तर्कों की काट-छाँट करने से चाय का स्वाद अच्छा न हो जायेगा। ऐसे अवसर पर आपके परिवार के सदस्य हल्की बाते सुनना चाहते है। यदि उन्हे मस्तिष्क पर जोर देना पडा तो चाय पीने मे मजा न आवेगा। गाँजा पीनेवाले जब निश्चित होकर दम लगाने बैठते हैं तो कहते हैं—जो करे गाजा के निन्दा, ओके घर कोइ रहे न जिन्दा। उन्हें क्या मतलब हैं समाज सुधारकों से। उन्हे तो धूम्रपान का मजा लूटना है, उनके सामने कोई इधर-उधर की बाते न करे।

५. मधुरता—संभाषण मे मधुरभाषी होना आवश्यक है। यदि वक्ता की बोली मधुर है, वाक्यों में यथास्थान उतार-चढ़ाव है,

शब्दों पर आवश्यकतानुसार अधिक और कम जोर दिया गया है तो शुष्क विषय भी रोचक हो सकता है। सजीव भाषा में विशेष आकर्षण रहता है। अधिक जोर-जोर से बोलना, बिना साँस लिये देर तक बोलते रहना, बातचीत करते हुये हिचकी लेना और नाक से बोलना, ये सब बड़ी खराब आदतें हैं। इनसे बचना चाहिये। परिवार या मित्र-मडली मे ऐसे जोर से बोलना मानो आप सार्वजनिक सभा मे बोल रहे हैं, बुरा है। लोग अपने कान बन्द कर लेंगे। शिष्टाचार के नाते भले ही आपको कोई न रोके, किन्तु लोग अपने कान को तो रोक ही सकते हैं।

६. **शिष्टाचार**—सभाषण में शिष्टाचार का विशेष ध्यान रखना चाहिये। अपने से बडों मे बोलते समय बहुत विनीत रहना चाहिये। बराबरवालो से तथा मित्र-मडली मे भी विनम्र रहना चाहिये। छोटों के प्रति भी कडा रुख न अपनाया जाय। यदि आप फौजी अफसर हैं तो भले आप अपने से नीचेवाले कर्मचारियों से अकडकर बोलें किन्तु शिष्ट समाज में आप ऐसा नहीं करते। जो अफसर मैदान में सिपाही से सीधे मुँह बात नहीं करता वह उसके घर आने पर भाई की तरह मिलता है। मैदान का शिष्टाचार और है, घर का और।

सभाषण मे कुछ लोग बड़ी मोटी भूलें करते हैं, जिनके कारण बनी बनाई बात भी बिगड जाती है। बात-चीत करने का एक अभिप्राय यह भी है कि हम दूसरों को अपनी बातों से कुछ आनन्द दे सके। बहुत से लोग हमारी बात से यों ही चिढ जाते हैं। कल्पना कीजिये आप से कोई कुछ कह रहा है। उसकी बातें आप चुपचाप सुनते जाइये। हर मिनट दो-तीन बार हाँ, हाँ कहते रहिये, वह खुश रहेगा। वह बोल रहा है, बीच मे काटकर कुछ बोल बैठे। वह सुन लेगा और फिर बोलना शुरू करेगा। आप फिर उसकी बात काटते

हैं, उसे बुरा लगेगा और वह आपकी बात को न सुनना चाहेगा। यदि वह फिर बोलता रहे और आप बीच में कूद पड़े तो वह चुप न होगा, बोलता रहेगा। आप भी बोलते रहेंगे। किसी की बात पर कोई ध्यान नहीं दे रहा है, फिर यह तो कोई संभाषण नहीं। जिसकी बात आप काटेंगे उसे बुरा लगेगा। अतएव भाषण मे किसी की बात काटना ठीक नहीं।

कुछ लोग बात-चीत मे ऐसा प्रसंग छेड़ देते हैं जिसके सबध में उनके अतिरिक्त कोई कुछ नही जानता। कभी-कभी कोई आदमी ऐसी भाषा मे बोलता है अथवा ऐसी हॅसी छेड़ता है जिसे एकाध आदमी के अतिरिक्त मित्र-मडली मे कोई नही जानता। दो एक आदमी समझते हैं और हॅसते हैं, बाकी लोग मुॅह ताकते हैं। यह बहुत बुरा है। यदि किसी एक आदमी के समझने की बात है तो सबके सामने कहने की आवश्यकता ही क्या है?

ट्रेन मे, बस मे, वेटिग रूम मे, पुस्तकालय मे, या अन्य ऐसी सार्वजनिक जगहों पर बोलना मना नही तो बुरा अवश्य है। आप किसी से बाते करें और किसी को उससे बाधा हो, यह ठीक नहीं। इसीलिये कई स्थानों पर लिख देते हैं 'बोलना मना है।' आपको किसी मित्र से यदि कुछ कहना ही है तो धीरे से कह लीजिये। इतने जोर से बोलने की जरूरत क्या है कि बीसों आदमी सुने! हो सकता है कि आप व्यवसाय के किसी नुस्खे पर अपने मित्र से बाते कर रहे हों, कोई दूसरा व्यवसायी उसी डब्बे मे बैठा आपकी बाते सुनकर अनुचित लाभ उठा सकता है। आप ट्रेन मे बैठे किसी मित्र से किसी षड्यन्त्र की बाते कर रहे हो, आपके डब्बे में खोफिया पुलिस का कोई कर्मचारी हो आपको गिरफ़्तार कर सकता है। एक कम्पार्टमेंट मे बैठी

दो महिलायें ट्रेन की बनावट पर बातें कर रही थी। एक ने कुली से कहा देखो सारी खिड़कियाँ बन्द कर दो मैं जाड़े के मारे मरी जा रही हूँ। दूसरी ने कहा अगर बन्द कर दोगे तो मेरा दम घुट जायेगा। कुली बेचारा कुछ न कर सका। एक और यात्री डब्बे मे था। वह उनकी बातें सुनकर ऊब गया था। उसने कहा—ठीक है, पहले बन्द कर दो ताकि एक मर जाय। फिर खोल देना ताकि दूसरी मर जाय। अन्यथा इन दोनों की बकबक से मैं ही मरा जा रहा हूँ।

बातचीत करते समय कभी क्रोध न करना चाहिये। ज्योंही आपने क्रोध किया, आपकी बातचीत का क्रम टूटा और आप जाने क्या क्या बकने लगेंगे। क्रोध के आवेश मे आप जो कुछ भी करते हैं, बुरा करते हैं, पीछे पश्चात्ताप होता है।

जब दूसरे आप से बात कर रहे हों तो उनकी बातों की ओर पर्याप्त ध्यान दीजिये। सार्वजनिक सभा मे यदि आप वक्ता की बातों को ध्यान से नहीं सुनते तो इसकी विशेष चिन्ता नहीं, किन्तु सभाषण मे यदि आप वक्ता की बात पर ध्यान न दे तो सभापण चल ही नहीं सकता है। वास्तव मे बोलना और सुनना सभाषण के दोनों अग हैं। एक बोले तो दूसरा सुने और दूसरा बोले तो पहला सुने।

सज्जनों की सगति में निम्न कोटि की कोई बात न कहिये और न तो निम्न कोटि के मुहाविरों का ही समावेश कीजिये। उनके सामने बहुत अलकृत भाषा का प्रयोग भी न करना चाहिये। सीधी बात कहिये, जरूरत पर बोलिये, फिर वहाँ से हट जाइये। यदि आप ऐसे लोगो के बीच बातचीत कर रहे हैं जो समाज में आप से ऊँचा स्थान रखते हैं, तो उनके सामने जरूरत से एक शब्द भी अधिक बोलने की कोशिश न कीजिये। उनकी बाते सुनकर हँस लीजिये, किन्तु उन्हें

हँसाने की कोशिश मत कीजिये। उनके हास-परिहास का स्तर आप नहीं जानते, उनकी मानसिक स्थिति से आप परिचित नही, उनकी परंपराओं के संबध मे आपको जानकारी नही है, फिर आपका उनकी बातों के बीच दखल देने का कोई भी प्रयास निष्फल होगा।

जैसा कह चुके हैं बोलना और सुनना दोनो संभाषण के अग हैं। दोनों में अन्योन्याश्रित सबध है। आपको जितना बोलने का अधिकार है, उतना ही बोलने का अधिकार दूसरे व्यक्ति को है। केवल एक तरफा बोलते रहना ठीक नहीं। दूसरे को भी समय दीजिये। किसी ऐसे विषय पर जिसकी जानकारी केवल आपको है, दूसरे को नहीं, दूसरा स्वयं आपकी बात सुनना चाहेगा। वह आत्म-समर्पण कर देगा, फिर आप बोल सकते हैं।

जब हम किसी से किसी दूसरे व्यक्ति के विषय में बाते करें तो हमें चाहिये कि बुराइयों के विषय में बाते न करें, बल्कि उसकी अच्छाइयों की चर्चा करें। किसी की बुराई करना निन्दा है। निन्दा करने से अपना लाभ है न दूसरे का। जिसकी निन्दा करते हैं उसके सामने तो कुछ बोल नही सकते, उसके न रहने पर हम वाचाल बन जाते हैं। यह भारी कमजोरी है। निन्दक की समाज में प्रतिष्ठा नहीं होती। जो दूसरे की निन्दा करे समझ जाइये कि वह कमजोर आदमी है और जिसकी निन्दा वह कर रहा है उससे हार चुका है। वास्तव में निन्दा करना ओछेपन का प्रमाण है। निन्दक की बात सुननी भी न चाहिये। यदि आप उसकी बातें सुनते जायेंगे तो उसे प्रोत्सा-हन मिलेगा।

एक ही बात को बार-बार दुहराना ठीक नहीं। ऐसा करना विचार के दिवालियेपन का प्रमाण है। जिसे कुछ कहने को नहीं

मिलता, वह एक ही बात को वार-बार फेरता रहता है। इससे समय का कितना अपव्यय होता है! उसे चुप हो जाना चाहिये और दूसरे की बात सुननी चाहिये, जब कोई नई बात कहने को मिले तो कहनी चाहिये। किसी हास्यजनक बात को कभी-कभी दुहराने का लोभ होता है। ठीक है, उसे दुहराना चाहिये, पर शर्त यह है कि सुनने-वालों को भी उसे सुनने का लोभ हो। हास्यजनक अवतरण को सुन-कर पहली बार लोग खूब हँसेगे। दूसरी बार कम हसेगे। तीसरी बार हँसेगे ही नहीं। चौथी बार सुनकर नाक-मुँह सिकोड़ेगे। भले ही मित्र-मडली आग्रह करे, किसी बात को दुबारा से तिबारा कहना आपके हित मे ठीक नही। उसका महत्व जाता रहता है।

बात-चीत मे केवल निजी बात करना बुरा है। प्रत्येक अवसर पर यदि आप अपने ही मतलब की बातें रखें तो सुननेवाले ऊब जायेगे। अपने कारोबार के बारे मे बात करना, अपनी स्त्री या बच्चों के बारे मे बाते करना आप को भले अच्छा लगे, इन बातों को सुनना अच्छा नहीं लगता। आपके मित्रों को आप से कुछ सबंध है, आपके कारोबार से और आपके बाल बच्चों से किसी को क्या लेना-देना है। हो सकता है आपका व्यवसाय मित्रों के व्यवसाय से अच्छा हो, हो सकता है आपके बाल-बच्चों मे दूसरो के बाल-बच्चों की अपेक्षा अधिक विशेषताये हों, फिर भी आप जब मित्र-मडली मे हैं तो दूसरों के बराबर ही हैं। आपको कोई अधिकार नहीं कि उनके समय का अनुचित रूप से अपहरण करें। स्पष्ट है प्रथम पुरुष के विषय में बाते करना निम्न कोटि की बाते हैं। हमने यह किया, हमने वह किया, हम यह हैं, हम वह हैं, यह कोई बात से बात है। गीता मे भगवान ने कहा—मै यह हूँ, मैं वह हूँ, मैं सब कुछ हूँ। एक मित्र ने एक दिन मुझसे भगवान के कथन की सत्यता

में विश्वास रखते हुये उनके कथन को इस शैली की समालोचना की।

संभाषण के बीच अपने को सत्यवादी, स्पष्टवादी, विद्वान् या धनवान कहना बुरा है। जो अपने को सत्यवादी कहता है वह लवार है, जो अपने को स्पष्टवादी कहता है वह फसादी है, जो अपने को विद्वान् कहे वह मूर्ख है और जो अपने को धनवान कहे वह दरिद्र है। अपनी भावी योजनाओं का लम्बा-चौड़ा वर्णन देना अथवा अपने किये हुये कामों को बिना पूछे बताना ओछा काम है। सुननेवाले बहुत बुरा मानते हैं। कवि गिरधरदास बहुत पहले कह गये हैं— 'करतूती कहि देत आप कहिये नहिं साईं।'

प्रथम पुरुष के विषय में बातें करनें से अच्छा है अन्य पुरुष के विषय मे बाते करना। वह पुरुष ऐसा हो जिसे उभय पक्ष (प्रथम पुरुष और मध्यमपुरुष) जानते हों। वह चाहे कोई व्यक्ति, कोई वस्तु या कुछ भी हो। उसके विषय में दोनों अनुरागपूर्वक समान अधिकार से बाते करते रहेगे। बाते प्रिय होंगी, रोचक होंगी और उपयोगी भी।

किन्तु सर्वोत्तम बात होती है मध्यम पुरुष के विषय में। आप जिस व्यक्ति से बातें कर रहे हैं उसी के विषय में बात भी कीजिये, देखिये, बातचीत का कितना अच्छा ढर्रा निकल पड़ता है। यह साधारण अनुभव की बात है, जब आप किसी से बाते करने जाते हैं तो एकाएक आप अपने को खाली पाते हैं। आपको कोई विषय ही नहीं मिलता जिस पर आप बातें छेड़ सकें। अपनी रुचि की कोई बात-चीत चलाई। उसे यदि इसमें दिलचस्पी नहीं है तो वह सुनेगा ही नहीं और चाहेगा कि आप बातें बन्द करके चले जाते। आप को साहित्य से बड़ी रुचि है। आपने साहित्यिक चर्चा छेडी। दूसरे को

खेलों से रुचि है। साहित्य से घोर अश्रद्धा है। भला वह आपकी बात कहाँ तक सुनेगा ?

इसलिये आपको चाहिये कि जिससे बातें करना अभीष्ट हो उसकी रुचि का पता लगावे फिर उसके बारे मे बातें प्रारंभ करें। रुचि का पता लगाना आपकी योग्यता पर निर्भर है। किसी मनुष्य का शारीरिक गठन, उसका पहनावा, उसका कमरा, उसका पुस्तकालय और उसका पेशा देखकर उसकी रुचि का पता लगाया जा सकता है। यदि शरीर का गठन अच्छा है, कमरे मे कहीं टेनिस का रैकेट और कही हाकी पड़ी हो तो समझ जाइये उस व्यक्ति को व्यायाम से विशेष रुचि है। यदि कमरे मे किताबों की ढेर है, जहाँ-तहाँ किताबें या कागज पड़े हुये हैं, तो समझ जाइये उसे साहित्य से रुचि है। बहुत से लोग मानव मात्र के कुशल पारखी हैं। वे कहते हैं किसी व्यक्ति को हमारे साथ दो मिनट के लिये छोड़ दो मै उसे ताड़ जाऊँगा। अनुभव से आदमी अच्छा पारखी बन सकता है। आप किसी के यहाँ जायँ, भले ही उसे बिलकुल न जानते हों, दो-चार बाते तो करने का अवसर मिलेगा ही। इन दो-चार बातो से आप उसकी रुचि का पता लगा सकते हैं। फिर यदि आप उससे अधिक देर तक बातें करना चाहते हों, यदि चाहते हों कि उस व्यक्ति पर अपने व्यक्तित्व की गहरी छाप छोड़ जायें तो ऐसे विषय को लीजिये जिसमे उसे रुचि हो।

कुछ लोग जो लोक कुशल हैं, किसी से मिलने जाते हैं तो हृदय से नहीं, दिखावे के तौर पर ही उसके कुत्ते से, उसकी बिल्ली से और उसके बच्चे से खेलने लगते हैं। दुनिया जानती है कि मानव मात्र अपने बच्चों से प्यार करता है। बच्चों के साथ खेलकर अपनी ओर ध्यान आकर्षित कराना एक कला है। कुत्ते के प्रेमी को खुश करने के

लिये उसके कुत्ते को खुश करना होगा। एक रईस कहा करते थे—यदि आप मुझसे प्यार करना चाहते हैं तो पहले मेरे कुत्ते को प्यार कीजिये।

आप किसी बडे आदमी से मिलने गये हैं। बातचीत को और चलाना चाहते हैं तो उसके व्यवसाय सम्बन्धी कोई गहरी बात पूछिये। दीवार पर लटकी घड़ी में कोई विशेषता है तो घड़ियों की चर्चा कीजिये। स्विटजरलैंड और अमेरिका की चर्चा कीजिये। उसका बच्चा आ जाय तो उसका परिचय प्राप्त कर लेने पर कहिये—बडा होनहार लड़का है। यह शिष्टाचार है, यह संभाषण के क्रम को चालू रखने का सुगम मार्ग है। पर एक बात का ध्यान रहे आपको स्वय उसकी रुचि के सम्बन्ध मे जानकारी रखनी होगी। कुत्ते की तारीफ करने के लिये कुत्ते की अधिक नहीं तो १०, ५ किस्मों का जानना जरूरी है। मोटर की तारीफ करने के लिये मोटर के दर्जनो मेक और उनकी विशेषताओं की जानकारी चाहिये। साधारण ज्ञान विविध विषयों का रखना अपेक्षित है। एक बात और, आप ही स्वयं बोलते न रह जाइये। कोई विषय छेड़ दीजिये और फिर सुननेवाले की हैसियत ले लीजिये। यदि आप बोलते ही रह गये, दूसरे को अवसर नहीं दिया, उसकी ओर से भी सारी बातें आप ही कह ले गये तो वह ऊब-कर कहेगा—जाने दीजिये, आपको हमारे कुत्ते या बिल्ली से क्या मतलब? छोड़िये इन बातो को। अपनी गरज कहिये।'

बीमा कंपनी का एजेन्ट जब किसी से बीमे के विषय में बात करने जाता है तो उसे बड़ी कठिन परिस्थिति का सामना करना पडता है। उसे बीमे में अनुराग है किन्तु दूसरे को तो बीमे से कुछ मतलब ही नहीं। फिर वह कैसे बातचीत चलावे? बीमा कम्पनी का

एजेन्ट बहुधा अनुभवी व्यक्ति होता है। वह यदि सीधे किसी के बीमा कराने के लिये कहता है तो उधर से कोरा जवाब पाता है, उसे किसी न किसी प्रकार बातचीत का एक समान स्तर लाना होगा। यदि वह बात-चीत का कोई समान स्तर ला देता है तो बात-चीत कुछ समय के लिये चल पाती है। एजेन्ट का काम अपेक्षाकृत इसलिये कठिन हो गया है कि लोग बीमा के सिद्धान्त नही जानते। एजेन्ट जिससे मिलता है वह बीमा के सिद्धान्तों के विषय में जानना चाहता है। बस बात-चीत का ढर्रा निकल पड़ता है। एजेन्ट यदि मनोरंजक ढग से बीमा के सिद्धान्त प्रस्तुत कर देता है तो उसका काम बहुत सरल हो जाता है। उसे चाहिये कि जिससे बात करे उसकी पारिवारिक और आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुये बीमा के सिद्धान्तों को प्रस्तुत करे। ऐसे उदाहरण रखे जो उसकी निजी आवश्यकताओं से सम्बद्ध हों। जिसके पास स्त्री नहीं हो उसकी स्त्री के लिये आर्थिक व्यवस्था करने के लिये सुझाव रखना, अथवा जिसके पास मोटर नहीं है उसकी मोटर का बीमा कराने की सिफारिश करना गलत है।

बीमेवालों को प्रस्तावकों के सम्मुख बार-बार मौत का हौवा न दिखाना चाहिये। केवल मौत का डर दिखाकर बीमा कराने को कहना अदूरदर्शिता है।

जब बीमावाले घुमा-फिराकर बातों मे उलझाना चाहते हैं तो बुरा लगता है। एक बीमेवाला एक वकील के पास गया। वकील ने पूछा—कैसे आये? उसने कहा—जीवन-मरण संबंधी एक प्रश्न पर बातें करने के लिये। वकील ने समझा कोई कतल का मुकदमा है। एकाध मिनट बातें करने पर जब उसे पता चला कि वास्तव मे वह बीमे का एजेंट है तो उसे बहुत बुरा लगा और फिर उसने उसकी एक न सुनी। एक दूसरे बीमेवाले ने एक आदमी से कहा—मैं

आपके बच्चों के लिये एक जायदाद स्थापित करने की बात करना चाहता हूँ। कुछ देर के बाद जब मालूम हुआ कि बीमे की पालिसी लेने की सिफारिश करता है तो बात वही बन्द हो गई। बीमेवालों को पर्दे के अन्दर बातें न करनी चाहिये। उन्हे प्रारंभ में ही अपना पूरा परिचय दे देना चाहिये।

बहुत से बीमेवालों को बातें करने का रोग होता है। आप सुनें या न सुनें वे बोलते जायेंगे। आप उनकी किसी बात को गलत पाकर आपत्ति करेंगे। फिर क्या बीमेवाला तो ऐसा चाहता ही है। आपकी आपत्ति का उत्तर देने में दो-चार मिनट फिर बोल जायेगा। लोग बीमेवाले को छेडना पसन्द करते हैं। वे बार-बार छेड़ते हैं, वह बार-बार समाधान करने का समय लेता है, बात ही बात में यदि वह अपने व्यवसाय में पक्का है, तो बीमा करा लेगा। बीमेवालों को प्रस्तावकों के प्रश्नों का स्वागत करना चाहिये। भले ही वे प्रश्न ऊट-पटाँग हों उसे जवाब देने में हिचकना न चाहिये।

जब आप किसी उच्च अधिकारी से मिलने जायँ तो बहुधा देखेंगे अधिकारी फाइल सामने रखे हुए है, उसे पढ़ता जाता है, उस पर लिखता जाता है और आपकी बातें सुनकर हाँ-हूँ करता जाता है। पर वह आपकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनता नही। वास्तव में यह अधिकारी का ही दोष है। जब वह काम में था तो उसे मिलने-वालों को नहीं बुलाना चाहिये था और यदि बुलाया तो उसे ध्यान-पूर्वक सुनना चाहिये। यदि ऐसे किसी अधिकारी से आपका सामना हो जाय तो आपको चाहिये कि जब वह फाइल को लिखने-पढ़ने लगे तो आप शान्त हो जायँ। वह जब आपकी ओर ध्यान दे आप बोलें, जब उनका ध्यान इधर-उधर जाय तो भले ही वह हाँ, हूँ

करके आपको बोलने के लिये उसकावे आप न बोलें। लाचार होकर वह फाइल को एक ओर रखकर आप की ओर ध्यान देगा।

कभी-कभी हम किसी काम से किसी अधिकारी के पास जाते हैं। काम की बात सीधे न कहकर घुमा-फिराकर कहते हैं। अधिकारी पूछता है—कैसे आये? उत्तर देते हैं—दर्शन करने आया। दर्शन हो जाने पर भी जमे रहते हैं। इधर-उधर की बातें छेड़तें हैं। प्रयाग में एक सज्जन प० जवाहर लाल नेहरू से मिलने गये। उन्होंने पूछा, कैसे आये? उत्तर मिला—दर्शन करने। पंडितजी ने चट कहा—हम कोई ऋषि-मुनि तो हैं नही। जाकर भरद्वाज का दर्शन कर लेतें!

वास्तव में 'दर्शन करने आया' कहना कोरी बनावट है। इसे सुनकर कोई खुश नहीं होता। जो लोग कुछ काम लेकर जाते हैं, वे जब ऐसा कहते हैं तो भारी खतरा मोल लेतें हैं। दर्शनार्थी की इच्छा पूरी भी नहीं होती और उधर से उत्तर मिलता है—अच्छा तो दर्शन कर लिया। अब जाइये। ऐसा उत्तर देना ठीक भी है। प्रायः वे सब लोग जो तथाकथित दर्शनार्थी हैं किसी न किसी काम से आते हैं। उनकी आदत है पर्दा देकर बात करने की। किसी को नौकरी दिलानी हुई तो देश-विदेश की बेकारी की समस्या पर प्रकाश डालेगे। घंटे आध घटे बात कर लेने के बाद कहेगे—'आपका दफ़्तर तो काफी बड़ा है। उसमें जगहे खाली रहती होंगी। एक आदमी बड़ा गरीब है, हमारे पीछे पड़ा हुआ है। देखियेगा अगर कोई जगह हो तो उसे लगा दीजियेगा।' सिफारिश करने का इससे बढ़कर ग़लत तरीका कोई हो नहीं सकता। आप समझते हैं आपने अपनी बात कह दी। और ऐसे ढंग से कही कि काम हो जायेगा। यदि न भी हुआ तो आपके

लिये कोई चिन्ता की बात नही। आपने तो बीसों बातें की हैं। उनमें से एक यह भी है। अपने को आप सान्त्वना भले दे ले। आपका काम न होगा। अधिकारी समझेगा आप तो दर्शन करने आये थे। बहुत सी बाते की। लगे हाथ एक आदमी की सिफारिश भी की। वह भी इसलिये नही कि आप स्वय उसे नौकरी दिलाना चाहते हैं। वह आपके पीछे पड़ा हुआ है, आप अपना पीछा छुड़ाना चाहते हैं। अगर वह काम होने लायक भी होगा तो आपकी सिफारिश के बाद न होगा।

मेरा अभिप्राय यह नही कि सिफारिश करने जाना ही चाहिये। पर मेरा अभिप्राय यह अवश्य है कि अगर जाइये तो पर्दे की आड़ मे सिफारिश न कीजिये। आप सिफारिश सीधे कीजिये। पहले सिफारिशवाली कहिये तब इधर-उधर की कीजिये।

जब हम किसी के पास किसी काम से जायें तो हमें उसका रुख देखकर अपनी गरज उसके सामने रखनी चाहिये। अगर वह स्वयं घबराया हुआ है, उसे स्टेशन जाकर गाड़ी पकड़नी है, उसका चश्मा खो चुका है, वह अपने काम मे ही डूबा हुआ है तो तत्काल उसके सामने अपने मतलब की बात न रखिये। उसे ऐसे समय में आपसे सहानुभूति न होगी और न आपकी बातों को याद ही रख सकेगा। उसके मतलब की कोई बात हो अथवा सार्वजनिक हित की कोई योजना हो तो आप उसे उपस्थित कर सकते हैं। इसी लिये बहुत से लोग साहब से मिलने के पहले उसके अरदली या खान-सामें से उनका मिजाज पूछ लिया करते हैं।

अध्याय १२

इन्टरव्यू

बातचीत हमारी सस्कृति का इतना आवश्यक अंग है कि जब हम किसी चुनाव के लिये खड़े होते हैं तो हमें बातचीत करनी होती है। हमारी बातों से लोग प्रभावित होते हैं तब तो हमे चुनते हैं अन्यथा छाँट देते हैं। उम्मेदवार और मतदाता में बातों का ही तो सम्बन्ध है। धारा सभाओं अथवा समितियों में हमारी प्रतिष्ठा हमारी बातचीत के अनुरूप ही होती है।

जब हम किसी नौकरी के लिये जाते हैं तो इन्टरव्यू होता है और हमें बातें करनी होती हैं। नौकरियों के लिये प्रतियोगिता होती है। प्रश्न-पत्र दिये जाते हैं। उनकी जाँच होती है। लेकिन इतने से संतोष नहीं होता। उम्मेदवारों को बातचीत करने के लिये बुलाया जाता है-मानों बातचीत प्रश्न पत्रों से भी अधिक आवश्यक है।

इन्टरव्यू में बातचीत कैसे की जाय, इस पर कुछ बातें बताई जा सकती हैं। नौकरी का उम्मेदवार एक दीन-हीन जीव है। प्रार्थना-पत्रों में अपने को 'परम विनीत सेवक' लिखता है। उसकी चाल-ढाल से, उसके पहनावे से और उसकी बातचीत से नम्रता टपकती है। उसे नम्र रहना भी चाहिये।

इन्टरव्यू बोर्ड का ध्यान उम्मेदवार के पहनावे, उसका शारीरिक गठन, उसके शिष्टाचार तथा उसकी बातचीत की ओर जाता है।

उम्मेदवार का पहनावा हर माने में ठीक चाहिये। मनुष्य से पहले

उसके बुरा बोलते हैं। इसलिये पहनावे की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। कपड़े मौसम के अनुकूल हों। गर्मी के दिनों में गर्म कपड़े पहनकर आनेवाले उम्मेदवार की केवल हँसी ही उड़ाई जायेगी। ऊपर हमने 'ठीक पहनावा' कहा है। ठीक पहनावे से हमारा अभिप्राय है ऐसे पहनावे से जो किसी चालू फैशन के अनुसार ठीक कहा जा सके। अगर अंग्रेजी कोट पतलून पहना तो टाई, मोजा भी आवश्यक है। पैर में अंग्रेजी जूता चाहिये, चप्पल या चमरौधे जूते से काम नहीं चलेगा। अंग्रेजी पोशाक पहनने पर सर के ऊपर कोई टोपी रखना ठीक नहीं। हैट लगाकर जाना और बोर्ड के सामने उसे उतारकर रख देना भी ठीक नहीं। आप की हैट कितनी ही अच्छी है, बोर्ड के मेंबरों की मेज पर स्थान नहीं पा सकती और न आप उसे अपनी बाँह के नीचे दबाकर चैन से दस-पाँच मिनट खड़े हो सकते हैं। यदि आप हैट लेकर गये ही हैं तो जब आपका नाम बोला जाय और आप कमरे में दाखिल होने लगें तो उसे बाहर रख छोड़िये। आपके सर पर बोझ न रहेगा, आपके हाथों को फुर्सत रहेगी। जूते से चरमचर की या खट-खट की आवाज न निकलती हो। जूते पर पालिश हुई हो। सर के बाल अच्छे कटे हों। मूँछ और दाढ़ी, अगर मुड़ी हो तो साफ मुड़ी हो। जो आदमी अपनी मूँछ-दाढ़ी को ढंग से नहीं रख सकता वह दूसरा काम कहाँ तक ढंग से कर सकेगा। नाखून ठीक से कटे हों। यों ये बातें बहुत साधारण हैं लेकिन इनका गहरा असर पड़ता है।

इन्टरव्यू के लिये देशी पोशाक भी उतनी ही अच्छी है जितनी विदेशी पोशाक। धोती, कुर्ता और टोपी नीचे जूता पूरी पोशाक है। देशी पोशाक के साथ टोपी आवश्यक है, और ऐसी टोपी को बोर्ड के सामने तक ले जा सकते हैं। उसे उतारकर मेज पर न रखिये।

पर कुर्ता, पाजामा कोई पोशाक नहीं। इसी तरह पाजामा, कमीज पर अंग्रेजी कोट भी फूहड़ लगती है।

शेरवानी, पाजामा आदि भी सही और प्रभावकारी परिधान हैं। पर शेरवानी के नीचे चौड़ा पाजामा अथवा पतलून डाल लेना ठीक नहीं।

कपड़े बहुत भड़कीले न हों। इन्टरव्यू मे आप जो भी कपड़े पहने आपके बदन मे ठीक आते हों। आपके चेहरे से, आपके शरीर से और आपके हाव-भाव से फुर्ती टपकती हो।

हृष्ट-पुष्ट और सुगठित शरीर बोर्ड के सदस्यों पर बड़ा अच्छा प्रभाव डालता है। शरीर की गठन ऐसी चीज़ नहीं जिसे आप दो-चार दिन मे बना सकें और न तो कोई कृत्रिम उपाय ही है जिससे आप घंटे आध घंटे के लिये तगड़े बन सकें। हाँ कमीज के नीचे स्वेटर पहनकर मोटा बनने का शौक कुछ लोग अवश्य रखते हैं।

आई० सी० एस० के एक उम्मेदवार से इन्टरव्यू बोर्ड ने पूछा—आप इतने दुबले क्यों हैं? चट उसने उत्तर दिया—आई० सी० एस० का इम्तहान मजाक नहीं है और न तो इलाहाबाद सेनीटोरियम है। सही है, शरीर में जो कमी थी, उसे उसकी बातों ने पूरा कर दिया।

ऐसे ही एक चपरासी उम्मेदवार से साहब ने पूछा—तुम इतने दुबले क्यों हो? उम्मेदवार ने कहा—मेरे बाप मेरे बचपन में ही मर गये। मेरी परवरिश ननिहाल मे हुई। मोटा कैसे हो सकता हूँ? उम्मेदवार ले लिया गया।

किसी पुस्तक मे एक इन्टरव्यू का हाल पढ़ा था। दस, बारह उम्मीदवार थे। बारी-बारी इन्टरव्यू के लिये आये। इन्टरव्यू करनेवाले अधिकारियों ने उस रास्ते पर जिससे होकर उम्मेदवार भीतर आते

अपने एक कागज का टुकड़ा गिरा दिया था। एक-एक करके उम्मेद-वार आये। कागज की ओर केवल एक उम्मेदवार ने ध्यान दिया। उसने कागज को उठाकर मेज पर रख दिया। वह चुन लिया गया, यद्यपि उसकी योग्यता औरों की अपेक्षा कम थी।

एक आदमी किसी व्यवसायी के यहाँ मुनीमी के लिए उम्मेद-वार था। व्यवसायी उसे नियुक्त कर लेने पर राजी हुआ। वेतन के सम्बन्ध में उसने कहा—१७ रुपये मासिक मिलेंगे।

उम्मेदवार ने कहा—१७ रुपया भी क्या कोई वेतन है।? १७ बुरी सख्या है। या तो १६ कर दीजिए अथवा १८।

व्यवसायी ने उसे न रखा। उसने सोचा जो स्वय १७ की अपेक्षा १६ लेना स्वीकार कर सकता है, वह हमारे व्यवसाय मे भी १७ की अपेक्षा १६ ले सकता है। इससे काम न चलेगा।

कभी-कभी इन्टरव्यू मे बड़ा मनोरजन होता है। एक उम्मेदवार से पूछा गया—क्या आप कोई खेल खेलते है?

उम्मेदवार ने कहा—हाँ, मैं ताश खेलता हूँ।

फिर पूछा गया—क्या आप गाना-बजाना जानते है?

उम्मेदवार ने कहा—गाना तो नही गा सकता, बाजा बजाना जानता हूँ।

कौन बाजा बजा सकते हैं? पूछा गया।

उम्मेदवार ने चट कहा—ग्रामोफोन।

एक इन्टरव्यू के सदस्य ने प्रतियोगी से अंग्रेजी मे कहा—वेट प्लीज।

प्रतियोगी ने कहा—१४४ पौन्ड।

कही एक ऐसे बाबू की आवश्यकता थी जो बुक-कीपिंग का विशेषज्ञ हो। पूछा गया—आपको बुक-कीपिंग का अनुभव है?

उम्मेदवार ने कहा—हाँ है। जब मैं कालेज में पढ़ता था तो दो बरस तक पुस्तकालय का अध्यक्ष था। बहुत सी किताबें रखनी पड़ती थीं। मुझे पर्याप्त अनुभव है।

नौकरी की इच्छा से कभी-कभी उम्मेदवार अधिकारी के यहाँ अनायास टपक पड़ते हैं। वे कई ढंग से आते हैं। जो उम्मेदवार साधारण शिष्टाचार से परिचित है, अवसर से लाभ उठाना जानता है और पहली भेंट में ही स्थाई छाप डाल सकता है, वह प्रायः सफल हो जाता है।

एक उम्मेदवार आता है और सीधे नौकरी की चर्चा न करके इधर ऊधर की बातें करता है। उठते समय कहता है—मैं यों ही भूलते-भटकते इधर आ पड़ा। यदि आप के यहाँ कोई काम हो तो बताइयेगा प्रार्थना-पत्र भेज दूँगा। अधिकारी समझ जाता है कि इस आदमी को काम करने की कोई लगन नहीं और न तो कोई गरज ही है। अगर लगन होती तो सबसे पहिले काम की बातें करता और यदि गरज होती तो सीधे नौकरी के लिये आता। यह तो यों ही भूलते भटकते आया है।

दूसरा उम्मेदवार आता है। उसके हाथ में प्रार्थना-पत्र है। वह सीधे काम की बातें करता है। अधिकारी से कहता है—मुझे आपके व्यवसाय में काम करने की प्रबल इच्छा है। बहुत दिनों से सोच रहा था कि कभी आप से मिलूँ और आपके सामने यह प्रार्थना पत्र रख सकूँ। मुझे आपके व्यवसाय में सहयोग देने की अमुक-अमुक योग्यतायें हैं।

अधिकारी पर ऐसे उम्मेदवारों की गहरी छाप पड़ती है। वह सोचता है—इस आदमी में हमारा काम करने की बड़ी लगन है। इतनी दूर से नौकरी के लिये आया है। इसे गरज है। इसे रख लेना अच्छा होगा। वह रख लिया जाता है।

अधिकारी जब पूछे कि आप क्या वेतन लेंगे तो बेधड़क कोई निश्चित रकम बतानी चाहिये। फिर उस रकम मे हटना ठीक नहीं। अधिकारी कच्ची बातवालों को नहीं रखना चाहता। जो लोग कहते हैं—मुझ बेकार को जो भी मिल जाय ठीक है अथवा जो कहते हैं आप जो उचित समझें वह दीजिये वे लोग भारी भूल करते हैं। वे स्वयं अपना मूल्य नहीं जानते, भला दूसरा उनका मूल्य क्या जाने ?

इस प्रकार व्यवसायियो अथवा अधिकारियों से मिलकर नौकरी पाने वालों की संख्या कम नही है। उम्मेदवार को चाहिये कि अधिकारी से मिलने के पहले भरसक पता लगा ले कि क्या उसके अधिकार में कोई नौकरी है। फिर उचित अवसर देखकर उससे मिले। जब उसके मिलने का समय हो, जब वह फुर्सत में हो तब मिलना ठीक होता है। अवसर की परख हर आदमी नहीं कर सकता। उम्मेदवार को इस कला मे दक्ष होना चाहिये।

हम जीवन के किसी भी क्षेत्र में हों हम वैसे लोगो से संपर्क स्थापित करना चाहते हैं जिनका रंग-ढग समाज के अनुकूल हो अथवा यों कहिये कि जो समाजगत शिष्टाचार का निर्वाह करते हो। अच्छा तौर-तरीका अपनाना बहुत सरल है किन्तु इसका मूल्य बहुत अधिक है। हाँ, शिष्टाचार में किसी प्रकार का दिखलावा न हो। विशेष कर ऐसे अवसर पर जब आप अपने निजी काम से किसी उच्च अधिकारी से मिलने गये हों, अथवा किसी नौकरी के लिये उम्मेदवार हों, आप शिष्टाचार के हर छोटे-मोटे नियम का पालन अवश्य कीजिये।

इन्टरव्यू में बहुधा पूछा जाता है—आप इससे पहले कहाँ काम करते थे अथवा कहाँ काम करते हैं। इस प्रश्न का उत्तर बहुत सोच-समझकर देना चाहिये। यह कहना कि मैं यहाँ आने से पहले दस-

पाँच जगह काम कर चुका हूँ। भले ही आपकी नौकरी ढूँढ़ने की क्षमता का परिचायक हो, पर इससे यह भी पता चलता है कि किन्हीं कारणों से आप नौकरी मे टिकते नही। अधिकारी आपके विषय में बहुत सतर्क हो जायगा। उसे सदेह हो जायगा कि आपको यदि वह रख भी ले तो आप उसकी नौकरी आसानी से छोड़ भी सकते हैं। यदि आप दर्जनों मालिकों की सेवा कर चुके हों, तब भी जब तक आपसे सारे मालिकों की बारी-बारी गणना करने के लिये न कहा जाय, आप उनकी चर्चा न कीजिये।

बोर्ड के सामने आने पर उम्मेदवार को चाहिये कि वह चेयरमैन का अभिवादन करे। बारी-बारी बोर्ड के सारे सदस्यों को प्रणाम करना ठीक नहीं। यदि वह चेयरमैन को नही पहचानता तो बैठे हुये सदस्यों के बीच उनके स्थान का विशेषता से अनुमान लगाकर उन्हीं की ओर हाथ उठाकर प्रणाम करना ठीक है। यों निर्लक्ष्य हाथ उठाना शिष्टाचार के प्रति उदासीनता है। जब तक बोर्ड बैठने की आज्ञा न दे, बैठना न चाहिये। सीधे बैठना चाहिये। दोनों पैर फैले हुये न हों। कमरे मे इधर-उधर देखना अथवा मेज़ पर रखी हुई किसी चीज़ को छूना बुरा है। बोर्ड की आज्ञा बिना उठना भी न चाहिये। चलते समय फिर चेयरमैन को प्रणाम करके जाना चाहिये।

इन्टरव्यू बोर्ड के जिस सदस्य से आप बातें कर रहे हों, ठीक उसकी ओर देखिये। सदस्य कान से आपकी बातें सुन रहा है, लेकिन आँख से आपको देखना भी चाहता है। आँख छिपाकर बात करना ठीक नहीं।

जिस भाषा में आपसे प्रश्न किया जाय उसी भाषा में आप उत्तर भी दीजिये। दो भाषाओं की खिचड़ी बोलना सर्वथा अनुचित है। दूसरी भाषाओं के चलते शब्दों का प्रयोग आप कर सकते हैं। उनका

पर्यायवाची ढूंढने में समय लगेगा जो बोर्ड के सदस्य देने को तैयार नहीं हैं।

जब आप से प्रश्न पूछे जायें तो आप प्रश्न का एक-एक शब्द अच्छी तरह सुन और समझ लें। ज़रा सोच लीजिये, तब उत्तर दीजिये। प्रश्न आधा ही सुनकर उत्तर देना अथवा बात काट-कर बोलना अनुचित है।

किसी प्रश्न का उत्तर आप नहीं जानते तो साफ कह दीजिये मैं इसका उत्तर नहीं दे सकता। हो सकता है बोर्ड प्रश्न को सरल करे अथवा आपको कुछ संकेत दे जिससे उत्तर देना सरल हो जाय। उत्तर न जानते हुये अगर आपने कुछ न कुछ कहना प्रारम्भ कर दिया तो आप भारी नुकसान उठाने जा रहे हैं। प्रश्न का उत्तर न देना उतना बुरा नहीं है जितना बुरा ग़लत उत्तर देना है। आप यदि साफ-साफ कह दे कि आप उत्तर नही जानते तो आप से दूसरा प्रश्न पूछा जायेगा। दूसरे का उत्तर न आये तो तीसरा पूछा जायेगा। बोर्ड को चकमा देना और किसी प्रश्न का उत्तर न देने पर प्रश्न को मोड़ना अथवा विषयान्तर करने की कोशिश करना बेकार है। बोर्ड आपकी चालाकी समझ जायेगा और आपको गहरा मूल्य चुकाना पडेगा। जरूरत से अधिक बोलना, बोर्ड को बोलने का अवसर न देना और अपनी वक्तृता से बोर्ड को प्रभावित करने का प्रयत्न भी सफल न होगा।

एक सलाह और अंतिम सलाह और देनी है। वह यह है कि बोर्ड के सामने उपस्थित होने पर घबराना न चाहिये। बोर्ड को आप अपना शुभचिंतक और सहायक समझिये। वह आपकी कमज़ोरियों के लिये नंबर देने के लिये नहीं है, आपकी विशेषताओं पर आपको नंबर देने के लिये है। वह आपको किसी अधिकार से

अथवा किसी नौकरी से वञ्चित करने के उद्देश्य से नही बैठा है, वरन् आपका अधिकार आपको सौंपने और आपको नौकरी देने के लिये है। हमारे एक मित्र बोर्ड के सामने कुछ घबरा गये। छोटे-बड़े चार प्रश्न पूछे गये, किसी का उत्तर न दे पाये। ये प्रश्न कतिपय गद्य लेखकों के संबध मे पूछे गये थे। तब बोर्ड का एक सदस्य बोल उठा—गद्य मे कदाचित् आपकी प्रगति कम है। हम लोग पद्य की ओर आवे। उन्हे बड़ी सात्वना मिली। पद्य पर जितने प्रश्न पूछे गये, सबका उत्तर दिया। वे चुन लिये गये।